रसकपूर

(ऐतिहासिक उपन्यास)

ध्यान माखीजा

□ प्रकाशक
उमेश प्रकाशन,
5 बी, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-110006

□ मुद्रक
प्रिंट आर्ट,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

□ संस्करण
1985

□ मूल्य
पन्द्रह रुपये

RASKAPOOR (A Historical Fiction)
by Dhyan Makhija

Rs 15-00

ऐतिहासिक सच्चाई

उस दिन मैं आमेर स्थित सिलाम्बी मन्दिर के पुजारी की बातें सुनकर विस्मय मे आ गया था। सितार के तारों को छेड़ते समय अचानक उन्होंने मुझसे कहा था—जानते हो, आमेर की इन पहाड़ियों का भी अपना एक इतिहास है। न जाने कितने रहस्य ये अपने गर्भ में छुपाए बैठी हैं।'

पुजारी की बात चौंका देने वाली थी।

फिर तो मैं पहाड़ियों में छिपे हुए रहस्यों की जानकारी प्राप्त करने के प्रयत्न में पूरी तन्मयता के साथ जुट गया। और तब मुझे यह जानकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि इन्हीं पहाड़ियों में एक 'अतृप्त आत्मा' अब भी अपने प्रियतम को ढूढती हुई भटक रही है।

शायद इसे मेरी कोरी कल्पना या मात्र भ्रम ही कहा जायेगा परन्तु यह शाश्वत सत्य है कि 'आत्मा' का अस्तित्व है। इसके अस्तित्व का चूंकि गीता या शास्त्रों मे भी स्वीकारा गया है इसलिए नकारा नहीं जा सकता, ऐसी बात नही है। आज भी 'आत्मा' के अस्तित्व का वर्णन यदा-कदा पढ़ने सुनने को हमें मिलता है।

सर ओलिवर लॉज और सर विलियम क्रुक्स ब्रिटन के माने हुए वैज्ञानिक हो चुके हैं। ईथर तत्व का पदार्थ के साथ क्या सम्बन्ध है इस विषय पर सर लॉज का अन्वेषण आज भी प्रामाणिक माना जाता है। सर लॉज और सर क्रुक्स दोनों ही वैज्ञानिकों ने 'आत्मा' के अस्तित्व और मरणोत्तर जीवन की यथार्थता को पूरी तरह से स्वीकार किया है। सर लॉज का पुत्र रेमण्ड प्रथम विश्व युद्ध में मारा गया था, परन्तु मरने के बाद भी पुत्र की 'आत्मा' का अपने पिता से निरन्तर सम्पर्क बना रहा और उस आत्मा ने अनेक महत्त्वपूर्ण सूचनाएं अपने पिता को दीं। इन्हीं सूचनाओं के आधार पर सर लॉज को अपने अन्वेषण कार्यों में काफी

सहायता मिली।

इग्लड के प्रमुख पत्र 'ईवनिंग पोस्ट' के सम्पादक विलियम कुलेन अमेर तथा प्रख्यात उपन्यासकार विलियम थक्रे जैसे विद्वानो ने भी 'आत्मा' के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए अनेक सस्मरण लिखे हैं।

बम्बई से प्रकाशित साप्ताहिक पत्र 'धर्मयुग' मे भी 'आत्मा' की यथार्थता को स्वीकारते हुए एक लेखमाला प्रकाशित हो चुकी है। 'उत्तरा बनाम शारदा' नामक इस लेखमाला मे बताया गया था कि नागपुर म रहने वाली उत्तरा के शरीर म कभी कभी कोई दूसरी 'आत्मा' प्रविष्ट हो जाती थी और उस समय वह युवती १५० वर्ष पूर्व की एक बगाली लड़की शारदा के रूप मे परिवर्तित हो जाती थी। तब वह विशुद्ध बगाली भाषा बोलने लगती थी। थोड़ी देर बाद अपनी पूर्वावस्था मे आ जाने पर वह सब कुछ भूल जाती थी और पुन उत्तरा बन जाती थी।

प्रस्तुत उपन्यास मे भी 'रसकपूर' की 'आत्मा' की ही कहानी है—वह आत्मा जो अपने प्रेमी महाराजा को आज भी आमेर के खण्डहरों म ढूढ रही है।

इस उपन्यास म जयपुर के खजाने का भी उल्लेख आया है। इतिहास साक्षी है कि शहशाह अकबर का सेनापति और उसकी राजस्थानी पत्नी का भाई महाराजा मानसिंह अद्भुत पराक्रमी योद्धा एव महत्त्वाकाक्षी व्यक्ति था। उसने मुगल साम्राज्य के विस्तार के लिए आसाम, बगाल तथा अफगानिस्तान मे अनेक युद्ध लडे थे और विजित रहा था। इन युद्धो म उसे लूट तथा मुआवजे के रूप म अपार सम्पदा हाथ लगी थी। एक किंवदन्ति के अनुसार तो महाराजा मानसिंह काबुल से अशर्फिया स्वर्ण मुद्राओ और हीरे जवाहरात का एक विशाल जखीरा ऊटो के काफिले पर लादकर जयपुर लाया था। उसके बाद भी मानसिंह से लेकर सवाई जय सिंह तक की पीढ़ियो ने निरन्तर इस खजाने म वद्धि की। और फिर एकाएक खजाने का यह विशाल भण्डार न जाने कहा लुप्त हो गया। विश्वस्त सूत्रो के आधार पर ऐसा लगता है यह खजाना कही जमीदोज

कर दिया गया था।

खजाने की खोज के लिये कई व्यक्तियों ने जोड़-तोड़ कोशिश की परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। यहां तक कि इमर्जेंसी के दौरान तत्कालीन केन्द्रीय सरकार ने भी लाखों रुपये व्यय करके इस खजाने को ढूंढ निकालने की व्यापक खोज करवायी परन्तु उसे भी निराश होना पड़ा।

इस उपन्यास का नायक महाराजा जगतसिंह १८०३ ई० में जयपुर की राजगद्दी पर बैठा था और मात्र बत्तीस वर्ष की अवस्था में ही स्वर्ग सिधार गया था। अपने अल्प जीवन-काल में उसे अनेक युद्ध लड़ने पड़े थे।

युवा राजा कलाप्रेमी तो था ही एक परम सुन्दरी नर्तकी के प्रेमपाश में वह बुरी तरह से जकड़ गया। रसकपूर नामक यह सुन्दरी नृत्य में पारंगत होने के साथ-साथ एक अच्छी गायिका भी थी। महाराजा जगतसिंह ने रसकपूर को रानी के रूप में स्थापित करने की भरपूर चेष्टा की, उसके नाम का सिक्का भी चलाया, परन्तु अपने सामन्तों के घोर विरोध के कारण उसे मुंह की खानी पड़ी।

रसकपूर कौन थी, जयपुर में कैसे और कहां से आई थी इसका इतिहास नहीं मिलता। नाहरगढ़ किले की कैद में से भागकर वह कहां चली गई थी इसका भी इतिहास में उल्लेख नहीं है। राजस्थान इतिहास के विशेषज्ञ कर्नल टाड और डा० शर्मा केवल इतना ही लिखते हैं कि वह अद्भुत सुन्दरी नृत्यप्रवीणा और कोकिल कण्ठा थी और महाराजा जगतसिंह उस पर दिलोजान से न्यौछावर था।

मुझे इस बात का सन्तोष है कि मैंने इतिहास की सच्चाई को ईमानदारी से कायम रखते हुए इस उपन्यास की रचना की है।

राजस्थान विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के अवकाश प्राप्त अध्यक्ष डा० माथुर लाल शर्मा का मैं हृदय से आभारी हूं, जिन्होंने इतिहास के सही तथ्यों की जानकारी कराकर मुझे पूरा सहयोग दिया।

जयपुर —ध्यान माखीजा

१ १-८८

जयगढ़ किले की दीवार

जंतर मंतर—सवाई जयसिंह की ज्योतिष वेधशाला

रसकपूर का सम्भावित चित्र
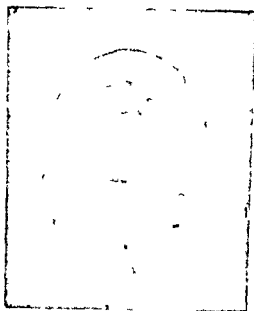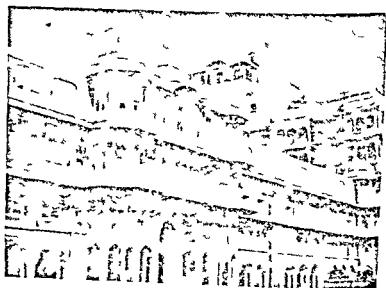
चन्द्रमहल

रसकपूर

जयपुर नगर देश के अन्य नगरों की तरह टेढ़ी मेढ़ी, घुमावदार भटका देने वाली गलियों वाला शहर नहीं है। और न ही इस शहर में ठूंठनुमा गिरने-पड़ने वाले बड़े मकानों की बेतरतीब कतारें हैं। ज्यामितिक कौशल द्वारा निर्मित इस शहर में ऊंची-ऊंची गगनचुम्बी इमारतें भी नहीं हैं। यहां एक दूसरे को समकोणों पर काटते हुए सीधे रास्तों के दोनों ओर एक विशिष्ट स्थापत्य शिल्प से चौकोर डिब्बानुमा इमारतें बनी हुई हैं। इस गुलाबी शहर को नाहरगढ़ किले की पहाड़ी से देखने से ऐसा लगता है जैसे पहाड़ की तलहटी में किसी नये बनाये जाने वाले शहर का एक सुन्दर 'माडल' रखा हुआ है।

मैं विश्व की एकमात्र इस गुलाबी नगरी को नाहरगढ़ किले की प्राचीर से ठगा-सा देख रहा था। समूचा शहर गुलाबी चुनरी में सजी-सजायी दुल्हन की तरह लग रहा था। शहर के चारों तरफ ऊंचा परकोटा था। परकोटे के बाहर नगर न्यास द्वारा निर्मित नयी बस्तियां सखियों की तरह दुलहिन को चारों ओर से घेरे हुए खड़ी थीं।

दिन का अभी पहला पहर समाप्त हुआ था। छोटी छोटी झरोखेनुमा खिड़कियों के लाल-पीले हरे कांच सूर्य की श्वेत किरणों को विभिन्न रंगों में रंगकर गुलाबी दीवारों पर बिखेर रहे थे। छतों पर अपने गीले बालों को सुखा रहीं तरुणियों के पायलों की छम छम आवाज चमकार मार रहे नाक के हीरे नीचे फेरी लगानेवालों को जोर-जोर से आवाज लगाने के लिए प्रेरित कर रहे थे। आवाज सुनकर कोई तरुणी मुंडेर पर ह

टेककर नीचे भाकती और अपनी गोरी कलाई हिलाकर फेरीवाले को रुक जाने का इशारा कर देती। जब तक फेरीवाला दहलीज पर अपना असबाव टिकाता छम छम करती हुई तरुणी अपनी ननदा जेठानियों के साथ पट-पट सीढियां उतरती हुई नीचे पहुंच जाती।

मैं इस सुंदर नगरी के सौंदर्य को निहारने में खोया हुआ था कि अचानक एक उड़ते हुए कपड़े की छुअन पाकर मैं चौंक उठा। हवा के एक झोंके के साथ एक उड़ता हुआ कपड़ा मेरी पीठ को छू गया था। मैंने मुड़कर देखा पर वहां मुझे कोई दिखाई नहीं दिया। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैं जिस दीवार पर खड़ा था उसकी चौड़ाई भी इतनी नहीं थी कि कोई अन्य वहां से गुजर पाता। मैंने नीचे भांककर देखा, किन्तु वहां भी कोई कपड़ा दिखाई नहीं दिया। मुझे बहुत अजीब लगा, पर फिर मैं इसे भ्रम समझकर पुनः आंखों के नीचे बिछे जयपुर शहर को देखने लगा।

बहुत सोच विचारकर योजनापूर्वक बसाया गया था जयपुर! तीन बड़े आयताकार क्षेत्रों में सीधी गलियां छोड़कर, एक दूसरे को देखते हुए चतुर्भुजाकार डिब्बों सरीखे मकान बनाये गये थे। हर मोहल्ले में ऊंची गुम्बजों वाले मंदिर बने हुए थे, जिन पर विभिन्न पताकाएं फहरा रही थीं। सीधी ड्योढी बाजार में बने हवामहल के पीछे चन्द्रमहल किसी अलसाई रमणी की तरह लग रहा था। उस पर फहरा रहा सामंती ध्वज माथे पर लगी बिंदिया की तरह झिलमिला रहा था। मकानों के बरामदे एवं मुंडेरों के कंगूरे हार की लड़ी की तरह शहर को पिरोये हुए थे। गलियां इतनी सीधी कि एक छोर पर खड़े हो जाओ तो शहर का दूसरा छोर दिखाई दे जाए। सारे शहर का नक्शा कुछ ऐसा लग रहा था, जैसे किसी सिद्धहस्त हलवाई ने थाल में सीधे चीरे लगाकर बर्फियां काटी हों।

दूर मोती डूंगरी जिसे तख्तशाही भी कहा जाता है दिखाई दे रहा था। उसके दायीं ओर रामबाग महल था।

सनसनाती करती हुई हवा का एक झोंका आया और मेरी पीठ को फिर

कोई उडता हुआ कपडा छू गया। ऐसा महसूस हुआ जैसे किसी तरुणी की साडी का आचल मेरे बालो को बिखेरता हुआ चला गया था। ऊच दर्जे की भीनी भीनी खुशबू भी मरी नासिका से टकराई। मैंने आगे-पीछे, दायें बायें सब तरफ देख डाला, पर कही कोई व्यक्ति नजर नही आया। फिर बार बार यह किसका आचल मुझे छू जाता है? अचानक मै भयभीत हो उठा, डर के मारे मेरी कपकपी छूटने लगी। मैं एक ही छलाग म दीवार से नीचे आ गया और सरपट नीचे की ओर भागा। पीछे मुडकर देखने की मेरी हिम्मत नही हुई। नीचे आबादी मे पहुचकर ही मैंने छुटकारे की सास ली।

मेरी मन स्थिति घर लौटने की नही थी। मैं अपने को सहज करने और इस रहस्य को किसी के सामने उद्घाटित करने के उद्देश्य से अपने एक अतरग मित्र पकज के घर पहुचा।

मेरी बात सुनकर बजाय चौकने के मेरा मित्र हस पडा। तुम भी कमाल के वहमी हो यार! भला ऐसा भी कभी हुआ है? कोई दिखाई दे नही और उसके कपडे छू जाए!'

"पकज! मेरी बात पर विश्वास करो। एक बार नही, दो बार किसी अदृश्य युवती की साडी का आचल मुझे छू गया था। साथ म भीनी-भीनी सेंट की खुशबू भी आई थी।'

पकज और जोर से हस पडा, 'अभी तक तो केवल पढा ही था कि कुछ लोग दिवास्वप्न देखने के आदी होते है परन्तु आज इसे साक्षात देख रहा हू। किसी रमणी की साडी का आचल छू गया था भीनी भीनी खुशबू आई थी! भाई वाह! कमाल का स्वप्न है! मजा आ गया!"

तुम मजाक समझ रहे हो और यहा मेरी हालत खराब हो रही है। पकज, मैं सच कह रहा हू नाहरगढ किले मे आज किसी के आचल ने मुझे दो बार छुआ है!'

पकज ने चेहरे पर कृत्रिम गम्भीरता लाते हुए कहा "मजाक नही समझ रहा हू, सही कह रहा हू। अवश्य ही तुम्हे वहम हो गया है। पुराने किलो-

महला मे अक्सर प्रेतात्माए भटकती रहती हैं, ऐसी एक भ्रामक धारणा बन गयी है। तुम भी इस धारणा के शिकार हो गये हो। कोई आचल-वाचल नहीं होगा दोस्त तुम्हें अवश्य भ्रम हुआ है।"

मैं अपने मित्र को किसी भी प्रकार यकीन नहीं दिला सका कि आचल की छुअन का मेरा वह अनुभव वास्तविक था। मैंने उससे आगे तक करना उचित नहीं समझा और चुप हो गया।

मेरी मनोदशा का गलत आकलन कर मेरा मित्र मुझे मनोविज्ञान का भाषण देता हुआ टहलाने ले गया।

हम घूमते हुए बडी चौपड के पास अवस्थित रामचन्द्रजी के मन्दिर मे पहुचे।

मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही हम बायी ओर के अहाते की तरफ से एक अजीब तरह के शोरगुल की आवाज सुनायी दी। भगवान को दूर से ही नमन करके हम दोनो भी उस शोर की ओर बढ गये।

भीड को चीरकर जब हम अदर पहुचे बडा ही विचित्र दृश्य दिखाई दिया। सामने जो कुछ हो रहा था उसे देखकर मेरा मित्र तो दग रह गया।

एक युवक फर्श पर पालथी लगाकर बैठा हुआ जोर जोर से अपना सिर हिला रहा था। वह मुह से भी कुछ अस्पष्ट सा बडबडा रहा था। युवक को चारो ओर से घेर खडे लोग कह रहे थे—"देवी आई है देवी आई है!"

युवक का सिर हिलाना जोर पकडता जा रहा था। अब वह अपने हाथ पाव भी फटकारने लग गया था।

आ गये! आ गये! पण्डितजी आ गये!" भीड मे से कोई बोल उठा।

देवी को उतारने के लिए किसी ओझा को बुलाया गया था।

पण्डितजी ने आते ही अपनी कारवाई शुरू कर दी। उन्होने मन्त्र बोलते हुए युवक को स्थिर करने का प्रयास किया, परन्तु युवक का हाथ-पाव फटकारना कम नहीं हुआ।

"देवी नहीं है, यह तो कोई प्रेतात्मा है!" कहकर पडितजी ने प्रेतात्मा को भगाने के लिए आवश्यक सामग्री मगवायी। सामग्री मे एक नारियल भी शामिल था। पडितजी पुन दूसरे प्रकार के मत्र पढ्ने लगे। एकाएक मत्र बोलना रोककर पडितजी जोर-जोर से बोलने लगे, 'बोल ! बोल, तू क्या चाहती है ? जल्दी बोल !"

मत्रो का असर हुआ, झूम रहे युवक ने एक जोर का फटकारा मारा और नारी-स्वर मे बोला, "इत्र दे राजन, इत्र दे ! मुझे इत्र दे दे राजन् !"

पडितजी एक गये और जो व्यक्ति उन्हे बुलाकर लाया था उससे पूछा, "क्या इसके पास इत्र है ?'

युवक के साथी ने बताया कि उसने जयगढ किला देखने के बाद आमेर से लौटते हुए इत्र खरीदा था।

पडितजी ने युवक की जेब टटोलकर इत्र की शीशी निकाली। फिर उन्होने नारियल को फोडकर दो भागो मे विभक्त किया और पुन मत्र पढने लगे। मत्र बोलने के साथ-साथ नारियल मे शीशी का इत्र उडेलने लगे। पडितजी जोर-जोर से बोलने लगे, "ले, इत्र ले और वापस जा ! ले अपना इत्र !'

युवक का झूमना धीरे धीरे कम होने लगा। शीशी का सम्पूर्ण इत्र नारियल मे पहुचने के साथ ही, युवक का झूमना बिल्कुल बद हो गया।

पडितजी ने इत्र का नारियल मे बद किया और एक डोर से नारियल बाधकर युवक के साथी से उस वापस आमेर की पहाडियो मे फेंक आने के लिए कहा।

अब तक प्रेतात्माओ का अस्तित्व नकारने वाले मेरे मित्र के चेहरे पर हवाइया उड रही थी। अपनी आखो के सामने प्रेतात्मा का अस्तित्व देख कर उसके चेहरे की रगत उड गयी थी। वह हैरत मे था।

लेकिन इस घटना से मेरी मनोदशा और अधिक बिगड गयी। मैं अपने मित्र का मनोविज्ञान भूलकर नाहरगढ किले और अब यहा आई प्रेतात्मा

म सम्बन्ध जोडन लगा। मैं सोच रहा था, क्या नाहरगढ किले म मुझे अपना आचल छुआने वाली और आमेर महल म जयपुर म इत्र लेने के लिए आई दोनो प्रेतात्माए एक ही हैं ? किले म आचल की छुअन के साथ-साथ इत्र की भीनी भीनी सुगन्ध भी तो आई थी। अवश्य ही यहा वही आत्मा आई थी ! मैं पुन भयभीत हो उठा, मेरी कपकपी फिर छूटने लगी।

मेरा मित्र जिसके चेहरे पर आत्मा के अस्तित्व के बोध का भाव अब स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा था मुझे मन्दिर से बाहर ले आया। उसने पडितजी को रोककर नाहरगढ किले म मेरे साथ घटित घटना सुनाई और साथ ही अपनी शका भी व्यक्त की।

हमारी बात को सुनकर पडितजी पहले तो किंचित गभीर हो उठे, फिर उन्होंने हम दोनो को 'आत्मा' का रहस्य समझाया।

पडितजी ने हमे बताया—"आत्मा का अस्तित्व शाश्वत सत्य है। आत्मा शरीर धारण करती है। शरीर धारण के पूर्व तथा शरीर का त्यागने के बाद भी आत्मा क्रियाशील रहती है। जब आत्मा शरीर धारण करती है तब उसका स्वतत्र अस्तित्व नही रहता। उस समय एक मायावी शक्ति उस पर हावी रहती है। शरीर का त्याग करने के बाद आत्मा का स्वतत्र अस्तित्व पुन कायम हो जाता है। कभी-कभी शरीर छोड देने के बाद भी आत्मा शरीर वाले परिवेश का बनाव रखना चाहती है। असल म ऐसा चाहने वाली आत्माए शरीर छोडते समय अतृप्त रह जाती है। तब ये शरीर वाले परिवेश की पुन प्राप्ति हेतु भटकती रहती हैं। कभी-कभी ऐसी आत्माए अपने त्यागे हुए शरीर का धारण किये हुए भी दिखायी दे जाती है। ये आत्माए अपनी अतृप्त इच्छाओ की पूर्ति मे सचेष्ट रहती है। कभी ये अदृश्य रहकर चेष्टाए करती है और कभी किसी के शरीर पर हावी होकर, जैसा कि अभी आप लोगो ने देखा।'

पडितजी की बात सुनकर मेरे मस्तिष्क म विचित्र विचित्र विचार कौंधने लगे।

सारे प्रकरण से पकज भी बुरी तरह विचलित हो गया था। उसे अपना

मनोविज्ञान अब काल्पनिक लग रहा था। वह भी मेरे साथ विचारमग्न हो गया था।

कुछ सोचते हुए पंकज ने मुझसे कहा, "कल हम दोनों नाहरगढ़ किले में चलेंगे।"

इस सुझाव से मैं बहुत मुश्किल से सहमत हुआ।

अगले दिन हम दोनों नाहरगढ़ किले में पहुंच गये। पंकज एडवेंचरस नेचर का था। वह किले के हर कोने का निरीक्षण कर रहा था, पर मैं अंदर-ही अंदर बहुत डरा और सहमा हुआ था। हम दोनों पूरे दो घंटा तक किले के अंदर-बाहर घूमते रहे, पर हममें से किसी को किसी आत्मा के दर्शन नहीं हुए, न ही किसी ने साड़ी के आंचल की छुअन को अनुभव किया। मैं पंकज को उस दीवार पर भी ले गया जहां मुझे जयपुर शहर देखते हुए आंचल की छुअन का अनुभव हुआ था। हम काफी देर तक दीवार पर खड़े रहे, पर न तो इत्र की भीनी भीनी खुशबू आयी और न ही किसी आंचल ने हवा के झोंके के साथ हमें छुआ। हम किले से नीचे उतर आये और बिना किसी निष्कर्ष पर पहुंचे अपने-अपने घरों को वापस आ गये।

मेरे कुछ परिजन दिल्ली से जयपुर घूमने आये थे। उन्होंने आमेर के ऐतिहासिक महल को देखने की इच्छा व्यक्त की। मैं उनके इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में हिचक रहा था। अदृश्य-अशरीरी आत्माओं का भय अभी तक मेरे मन में बना हुआ था। मैं महलों किलों से दूर ही रहना चाहता था।

आमेर चलने में अपनी असमर्थता के लिए मैं कोई ठीक सा बहाना नहीं ढूंढ सका। परिजनों की जिद के आगे मुझे झुकना पड़ा और हम सब दूसरे पहर आमेर के लिए रवाना हो गये।

यहां, उपन्यास के पाठकों को, आमेर का संक्षिप्त परिचय देना आवश्यक है।

आमेर जयपुर का ही प्राचीन नाम है। प्रारम्भ में कछवाहा राजपूत शासकों की राजधानी आमेर नाम से थी। राजधानी पहाड़ियों की घाटियों के मध्य बसी हुई थी। १७२७ ई० में सवाई जयसिंह ने आमेर की घाटियों से शहर को उठाया और पहाड़ियों से फिर समतल मैदान में अपने नाम से नया नगर बसाया जो जयपुर कहलाया। नयी और पुरानी राजधानियों में सड़क मार्ग से करीब सात किलोमीटर की दूरी है।

पुरानी राजधानी आमेर में एक किला (जयगढ़), दो महल और दो प्राचीन मंदिर हैं। अन्य भी कई मंदिर हैं, जिनमें जैन मंदिर मुख्य हैं, पर इनका निर्माण बाद के समय में हुआ है और क्योंकि इनका सम्बन्ध इस उपन्यास के कथानक से भी नहीं है अतः यहां इनकी चर्चा निरर्थक है।

महलों में एक महल पहाड़ पर अवस्थित है और दूसरा पहाड़ियों के बीच तलहटी में। प्रारम्भिक शासक तलहटी में बनाये गये पहाड़ियों से घिरे इसी महल में रहते थे।

यह महल बहुत पुराना है। काफी समय तक कछवाहा राजा इस महल में रहे। कछवाहा राजपूत अयोध्या के महाराजा रामचन्द्रजी के पुत्र कुश के वंशज थे। आमेर में इनका राज्य ९६७ ई० में स्थापित हुआ था। उस समय इसका नाम आमेर न होकर ढूंढाड़ था। यहां का प्रथम राजपूत शासक धोलाराय था। धोलाराय नरवर का राजकुमार था। नन्हे राजकुमार धोलाराय के पिता सौढादेव की अकाल मृत्यु हो गयी थी। सौढादेव का भाई राजकुमार धोलाराय को राजगद्दी पर बैठाने के बजाय खुद राजा बन बैठा। खतरा भांपकर धोलाराय की मां शिशु धोलाराय को लेकर एक भिखारिन के वेश में एक रात नरवर के राजमहल से निकल भागी और मीणा राजाओं की राजधानी खोगांव में जा पहुंची। खोगांव जयपुर से करीब पांच मील उत्तर-पूर्व में स्थित है।

खोगांव में नरवर की राजमाता राजकुमार धोलाराय को लिए एक पेड़ के नीचे भिखारिन के वेश में बैठी हुई थी। उसे जोरों से भूख लग आयी थी। बालक धोलाराय भी भूख से बिलख रहा था। तभी एक ब्राह्मण उस

पड के पास से गुजरा और भिखारिन की दशा दखकर उसके हृदय म दया उपजी। उसने उसके लिए आहार का प्रबध किया। ब्राह्मण भिखारिन क चेहर के तेज और उसके व्यवहार स बहुत प्रभावित हुआ। वह उस समझा-बुझाकर मीणा राजा के पास ले गया। मीणा राजा न भिखारिन का अपन महल मे दासी के रूप म रख लिया।

दासी का पाकशाला की मुखिया बना दिया गया। वह प्रतिदिन अपन हाथ स बडे ही स्वादिष्ट व्यजन बनाकर राजा का खिलाया करती थी। मीणा राजा ऐसे स्वादिष्ट व्यजन खाकर बहुत प्रसन्न हुआ और एक दिन इनाम दने के प्रयोजन मे उसन दासी को दरबार मे बुलाया। सभा म बाता ही बाता मे रहस्य खुल गया। यह जान लेन के बाद कि दासी के रूप म नरवर की राजमाता ही उसके महल मे रह रही है, मीणा राजा ने राज माता का यथोचित सत्कार किया और उसे अपनी बहिन बना लिया। अब राजमाता सुख-सतोष के साथ अपने दिन काटन लगी और पुत्र घोलाराय को आग की घटनाआ के लिए तैयार करन लगी। किन्तु राजकुमार घोला-राय बडा कृतघ्न सिद्ध हुआ। जवान होन पर उसने गद्दारी की और एक दिन जब वद्ध मीणा राजा सरोवर म नहा रहा था, घोलाराय न उसका वध कर डाला और खोगाव को तहस-नहस कर दिया। खोगाव के पास ही आमेर म उसन अपना नया राज्य स्थापित कर लिया।

घोलाराय न सवप्रथम आमेर मे ही एक ऊची पहाडी पर छोटी-सी गढी—विजयगढी का निर्माण किया, जो कालान्तर म विस्तत हाकर जयगढ बन गयी। घालाराय के वशज चार सौ वर्षा तक विजयगढी म रहकर ही राज करते रहे। फिर उन्हान पहाडी की तलहटी म नये सुविधा जनक महल का निर्माण किया और पहाडी से नीचे उतर आये। पर यहा सुरक्षा की दृष्टि से उन्हें हमेशा सतक रहना पडता था। इसलिए यह महल उन्हें असुरक्षित महसूस हुआ। पुन पहाडी पर एक भव्य महल का निमाण शुरू हुआ और सवाई जयसिंह न जब तक नयी राजधानी का निर्माण नहीं कर लिया, वे इसी महल मे रहकर राज करत रहे।

हम जव आमेर पहुचे तव वहा काफी पयटक आ गय थे।

मैने एक-एक करके लगभग सभी प्राचीन स्थल अपने परिजनो को दिखाये। जयगढ नही दिखा सका क्याकि वहा किसी को भी जाने की इजाजत नही थी। विशिष्ट व्यक्तियो को भी नही। जयगढ अभी तक जयपुर राजघराने की सम्पत्ति है। वहा दिन रात कडा पहरा रहता है। सिर्फ आपातकाल के दौरान ही यहा चहल-पहल हुई थी। काग्रेस सरकार ने यहा कथित खजाने की खोज के लिए लाखो रुपये व्यय किये थे। सेना, भूगभशास्त्री, इतिहासकार, पुरातत्त्ववेत्ता व अनेक इजीनियरो की मदद से खजाना पाने के लिए यहा व्यापक खुदाई करायी गयी थी, पर खजाना नही मिला।

मदिर मे सिलादेवी के दर्शन करने के बाद हम सब जलेब चौक (महल का विस्तृत अहाता) म बठकर सुस्ताने लगे। आमेर की पहाडी का आकर्षण लगातार मेरे परिजनो को खीच रहा था। वे पहाडी पर चढने का आनन्द लेना चाहते थे। मैने इस प्रस्ताव का भरपूर विरोध किया, पर मेरी चली नही। सब पहाडी पर जाने के लिए उठ खडे हुए। अनिच्छा से मुझे भी सबके साथ पहाडी पर चढना पडा।

हम गिरते पडते हसते गाते पहाडी की चोटी पर जा पहुचे।

ऊपर काफी समतल स्थल था। वहा बनाया गया परकोटा (शहर की सुरक्षा के लिए बनायी गयी दीवार) हालाकि अनेक स्थानो पर टूटकर ढह गया था, तथापि वह प्राचीनकाल की दर्शनीय कारीगरी और मजबूती को उजागर कर रहा था। परकोटे के साथ थोडी थोडी दूरी पर जो बुर्ज बने हुए थे, वे तत्कालीन सुरक्षा चौकियो का काम देते थे।

दोपहरी अपना दामन सध्या को थमाने जा रही थी। अब तक आखो को चौंधियाने वाले दिनकर की प्रखरता क्षीण हो चुकी थी। आकाश के एक कोने मे अब यह फैला हुआ लाल गोला ऐसा लग रहा था जैसे सपूर्ण शौर्य का प्रदर्शित कर चुकने के बाद बुरी तरह थक गया हो और एक कोने म पडा सुस्ता रहा हो। चुराये हुए शौर्य को लेकर दूसरे कोने म चन्द्रमा

हसने लगा था। ज्यों ज्यों सूरज निस्तेज होता जा रहा था, चन्द्रमा का रूप खिलता आ रहा था। लगता था जैसे सूरज के शौर्य का अंतिम रसपान कर चन्द्रमा ने चांदनी का दूध पिलाकर उसे सुला दिया हो।

ऊपर की प्राकृतिक छटा इतनी मनमोहक थी कि हम समय का ध्यान ही नहीं रहा। हम सब ऊपर पहुंचकर एक दूसरे से बिछुड़ गये थे। जिसे जो स्थल भाया वह उस तरफ बढ़ गया था। मुझे छतरीनुमा बुर्ज आकर्षित कर रहा था, मैं उसी ओर बढ़ गया। वहां पहुंचकर उसके अंदर बैठकर यह अनुभव करने की इच्छा हुई कि प्राचीनकाल में प्रहरियों का यहां बैठकर कैसा लगता होगा। मैं बुर्ज के अंदर जाकर बैठ गया। सामने का दृश्य बड़ा ही मनोरम था। दूर दूर तक पहाड़ियों का सिलसिला, तब नाहरगढ़ का किला और फिर उसके पीछे छिपा हुआ जयपुर शहर!

मैंने कुछ नोट करने की दृष्टि से जेब में से डायरी और पेन निकाली और लिखने लगा। अभी एक शब्द ही अंकित कर पाया था कि किसी ने पीछे से आकर मेरे हाथ को सख्ती के साथ पकड़ लिया। मैंने चौंककर मुड़कर देखा, परन्तु वहां मुझे कोई दिखाई नहीं दिया। जिस सख्ती के साथ मेरा हाथ पकड़ा गया था, उसकी पीड़ा से एकाएक मैं चीख पड़ा और मारे डर के थर थर कांपने लगा।

'डरो मत! मैं तुम्हारा कोई अनिष्ट नहीं करूंगी।"

यह किसी अदृश्य नारी का मधुर स्वर था।

मैंने पुनः मुड़कर देखा, वहां कोई न था। फिर वही उड़ता हुआ आंचल मेरे मुख पर आ गिरा।

मैंने हिम्मत बटोरी और कांपती आवाज में पूछा "कौन हो तुम?"

अदृश्य हाथ की पकड़ धीरे धीरे ढीली हो गयी। मेरी कलाई नारी-पकड़ से मुक्त हो गयी।

नारी स्वर पुनः मुखरित हुआ ' मैं तुम्हारी दुश्मन नहीं मित्र हूं। बल्कि तुमने तो मुझ पर बहुत से एहसान कर रखे हैं!

"पर मुझे तो कुछ दिखायी नहीं दे रहा है? क्या तुम प्रेतात्मा हो?'

" नही! मैं प्रेतात्मा नही हू। "

" फिर कौन हो ? '

" एक भटकी हुई अतप्त आत्मा ! "

"मुझसे क्या चाहती हो ? '

"थोडी सी मदद ! "

मदद ? एक सासारिक व्यक्ति से ? आत्मा तो स्वय मे सिद्ध शक्ति होती है।

हा! यही तो विडम्बना है। थोडा रुक कर उसने फिर कहा, मैं तुम्हारे लिए गैर नही हू। तुम ही तो वह पुरुष हो जिसने सर्वप्रथम मेरी कला की कदर की थी। तुमने ही तो मुझे मेरी मजिल पर पहुचाया था। पर हाय रे मेरा दुभाग्य! " आत्मा सुबकने लगी।

मैं मौन था।

तुम मौन क्यो हो ? क्या तुमने अभी तक मेरी आवाज नही पहचानी ?

अदृष्ट आत्मा की आवाज सुरीली और मधुर थी जैसे किसी श्रेष्ठ गायिका की होती है। परन्तु मैंने पहले यह आवाज कही सुनी हो, ऐसा मुझे नही लगा हा फिर मुझे एकाएक याद आया। उस दिन रामचन्द्रजी के मदिर म युवक पर चढी आत्मा की आवाज 'इन्द्र दे द राजन इन्द्र द द' म इसी स्वर की खनक थी। स्मरण होते ही मैं सिहर गया और डर के मारे पुन मेरी कपकपी छूटने लगी। मेरी आखो क सामने उस दिन क भूमते युवक का चित्र उभर आया। मैंने तुरत अपनी जेबो म स सब कुछ निकाल कर बाहर रखना शुरू कर दिया, ताकि आत्मा बिना मागे के ही अपनी मनचाही वस्तु लेकर चली जाए। मैंने सारा सामान पेन डायरी पस कघा, रूमाल और आज ही सुबह मेरी प्रेयसी द्वारा भेजा गया प्रेमपत्र सब कुछ फश पर बिखेर कर रख दिया। पर आत्मा ने कोई वस्तु नही उठायी।

उल्टा, अदृश्य आत्मा मेरे इस कृत्य पर खिलखिलाकर हस पडी।

"य सब वस्तुए तुम वापस अपनी जेव म रख लो। मुझे इनम स कुछ भी नहीं चाहिए और तुम्हारे पास इन ता है नही।"

मैं हत प्रभ बैठा रहा।

"तुम मुझसे डरो मत। मैं फिर कह रही हू मैं तुम्हारा कोई भी अनिष्ट नही करूगी। मुझे ता बस, तुम्हारी मदद चाहिए। मुझे पहिचानन की कोशिश करो। मेरी आवाज पहिचाना। मुझे पहिचान लाग ता तुम खुश हो जाओग।" फिर वह स्वय ही कुछ गुनगुनान लगी।

मैंन स्पष्ट कह दिया, " मैं तुम्हारी आवाज नही पहिचान पा रहा हू।'

"अच्छा!" कहत हुए आत्मा निराश हा गयी। फिर बाली मैं तुम्हारे सामन वही सितार बजाती हू जो तुम्ह बहुत ही प्रिय थी और जिसे तुम बडी तन्मयता के साथ बजाया करत थे।'

दूसरे ही क्षण मेरे सामने सितार बज उठा। बहुत पुराना सितार था वह। लगभग पौने दो सौ वष पुराना। पर सितार की झकार आज भी ताजा सी लग रही थी। सितार के तार जग खाय हुए नही थे। लगता था, जैसे कोई वर्षों से इसे बजाता चला आ रहा ह।

मैं सितार को भी नही पहचान सका।

सितार बजना बन्द हो गया।

'अब भी नही पहचान पाय ?"

"नहीं।'

"ओफ! ' आत्मा और भी निराश हो गयी। 'तुम तो सब कुछ भूल गये हो! तुम्हें तुम्हें कुछ भी याद नही रहा क्या?"

मुझे तो कुछ भी याद नही आ रहा है!'

'अच्छा! तो फिर तुम्हारे सामने मैं उसी रूप म प्रकट होती हू, जिस रूप म तुमन मुझे पहली बार देखा था।" वह निहायत करुणामय स्वर म बोली,"अब तो पहिचान लेना मुझे।'

कुछ क्षणा की स्तब्धता के बाद बुज के पूर्वी खम्भे की ओर मुझे कुछ हिलता सा दिखाई दिया। एक दूधिया सगमरमरी पाव 'छम से फश पर

आ टिरा । पाव धीर धीर उपर उठन लगा और जमीन के समानान्तर हो गया । पाव की गठी हुई पिंडलिया देखकर मुझे यह अनुमान लगाते देर नहीं लगी कि यह पाव किसी नृत्यागना का है । पाव म विशेष प्रकार की बनी पायल चमक रही थी । दो बार पाव टिकाकर पायल झकृत कर मुझे कुछ स्मरण कराने की चेष्टा हुई । पर मेरे मानस-पटल पर अतीत का कोई चित्र उभर कर नही आया जिससे इस पायल का बोध हो सकता । पाव पुन फश पर आ टिका । फिर एक हाथ खम्भे की आट से बाहर आया । पूरी बाह विभिन्न आभूषणो से सजी हुई था । ऐस आभूषण मैंने पहले कभी नही देखे थे । सोने के कगन म जडे मानक आखो का चौंधिया रहे थे । गोरी मासल बाह के आखिरी सिरे पर, कधे से दो इच नीचे 'सूय' की आकृति लिये हुए एक विशेष प्रकार का आभूषण था । दूसरे हाथ की अगुली उस आभूषण पर आ टिकी ।

नहीं ! मैं अब भी नहीं पहचान सका हूं । '

मेरे ऐसा कहने पर सारा शरीर खम्भे की आट म से निकल कर मेरे सामने आ गया । सामने खडी युवती का रूप देख कर मेरी आखे चौंधिया गयी । साक्षात अप्सरा खडी थी । मै इस अकल्पनीय रूप को देख कर ठगा सा रह गया ।

म विस्फारित नेत्रो से उस रूपसी को देखे जा रहा था ।

धीमे धीमे कदमो से रूपसी मेरे करीब आ गयी । उसने मेरे मुह को अपने दोनो हाथो म भरकर कहा ' अब तो जान गये न मैं कौन हू ?

मैंने फिर ना म उत्तर दिया ।

रूपसी के अधरो पर तैर रही मुस्कान एकाएक लुप्त हो गयी । उसके गुलाब की पखुडियो जैसे अधर थोडा सा काप कर स्थिर हो गये । उसकी शखाकार आखो की पुतलिया नम हो गयी । अपनी पतली-पतली अगुलियो से मेरे होठ सहलाते हुए उसने पुन पूछा, सचमुच नही पहिचाना ? '

"नही !"

एक कराह के साथ रूपसी चावारे पर बैठ गयी। उसके चहर की लावण्ययुक्त ललाई मन्द पड गयी। उसकी बडी बडी आखो स दा आसू टपक पडे। "मेरा दुर्भाग्य ! वह भी नही मिले और तुम भी मुझे भूल गय !"

वह' कौन ? यह प्रश्न मर मस्तिष्क म चक्कर काटन लगा। फिर मैं कौन हू जा इस रूप सुन्दरी को भूल बैठा हू ! मैं स्वय विचारो मे खो गया।

थाडी देर बाद रूपसी उठ खडी हुई। उसने मरा हाथ पकडा और परकोट के सहार चलन लगी।

पहाडी पर दूधिया चादनी की चादर बिछी हुई थी। अकाश मे फैला हुआ लाल गाला पुन शौय के प्रदशन के लिए अन्तर्धान हो चुका था। परकोटे की लम्बी छाया पहाडी से उतरती चली जा रही थी। मेरी छाया पडा को लाघती हुई तिर रही थी। अचानक मैं चौक कर रुक गया। सिर्फ मरी एक ही छाया जमीन पर पड रही थी। मेरे साथ चल रही रूपसी की छाया वहा नही थी।

मेरे रुक जाने से रूपसी भी रुक गयी। वह मुस्कराकर बोली "भयभीत मत हाओ। छाया सिर्फ सासारिक प्राणियो की हुआ करती है।' उसने पुन मेरा हाथ पकडा और चलने लगी।

एक टीले पर आकर वह रुक गयी। जहा हम रुके थ वहा स सामने की पगडडी की ओर स कुछ अधिक चौडा रास्ता बना हुआ था। रास्ता नाहरगढ किले की आर जा रहा था। सामन नाहरगढ किले की प्राचीर दिखायी द रही थी। जहा हम खडे थ वहा परकाटे म एक छाटा सा रास्ता बना हुआ था। सभवत यह नाहरगढ किले स आमर महल को जाने-आन वाले सदशवाहका के लिये कोई माग रहा हो।

रूपसी न सामने की आर अगुली दिखात हुए कहा, 'मैं इधर से ही भागी थी, तुम्हे अकेले ही उन निदयी और क्रूर राक्षसा के चगुल मे

निरीह छोडकर। इसके लिए मैं कई राता तक रोती रही थी।"

मुझे रुपसी की बाते बिल्कुल समझ मे नही आ रही थी।

उसने पुन मेरे मुह का अपनी हथेलिया मे भरकर कहा, "मैं तुम्हारे उस एहसान को आज तक नही भूली हू। तुम मेरे लिए देवपुरुष हो जिसने न सिर्फ मेरी कला की कद्र की थी, बल्कि मुझे मेरी मजिल तक भी पहुचाया था। परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य ही था कि व मुझे नही मिल सके" रुपसी पुन रूआसी हो गयी। उसने मेरे गालो से अपने हाथ हटाते हुए कहा, "अब तुम जाओ। बहुत देर हो चुकी है। तुम्हारे परिजन नीचे जलेब चौक म चितातुर होकर तुम्हारी प्रतिक्षा कर रहे हैं।

मै अपने साथ आये परिजनो को भूल ही गया था। स्मरण होते ही मुझे चिता हुई। मै लौटने को उद्यत हुआ।

रुपसी ने मेरी कलाई पकडकर पूछा, "क्या तुम मुझसे दुबारा मिलोगे?

'क्यो नही!"

' डरोगे तो नही?"

"अब डर किस बात का!"

रूपसी खुश होते हुए बोली 'मैं तुम्हारा कल नाहरगढ किले की उसी प्राचीर पर इतजार करूगी। ठीक उसी जगह जहा मैंने तुम्हारा पहला स्पर्श किया था।"

मैंने आने का वायदा कर दिया।

और सुनो!' मैं रुक गया।

अकेले ही आना। किसी को भी अपने साथ मत लाना और न इस बात का किसी से जिक्र ही करना।'

अच्छा' कहकर मैं पहाडी से नीचे उतर आया।

मैंने एक बार मुडकर देखा रूपसी वापस बुर्ज की तरफ जा रही थी। उसका लाल साडी का आचल हवा म लहरा रहा था। मैं यह

दखकर दग रह गया वि अधेरे म भी रूपसी का चेहरा, याह पाव सब साफ-साफ चमक रह थे। वह सीधी चली जा रही थी, उसन एक वार भी पीछे मुड कर नही देखा।

मैं जव नीचे पहुचा, अनेक चौक मे बैठे मरे परिजनो के मुह पर हवाइया छूट रही थी। मुझे देखते ही उनकी जान मे-जान आई।

"आ गया आ गया !" कहने हुए वे सब खडे हो गये।

'कहा चले गय थ तुम ?"

एक के वाद एक, मरे परिजनो न प्रश्नो की भडी सी लगा दी। पर मैंन उन्हे आज के वत्तान्त के बारे म कुछ भी नही वताया। यह कहकर उन्हे आश्वस्त किया कि राह भटक कर कही दूर निकल गया था इसलिए लौटन म समय लग गया।

ईश्वर का धन्यवाद करते हुए सब परिजन जयपुर लौट आय।

अगले दिन मैं नियत समय पर नाहरगढ किले म पहुचा। शाम का वक्त था। पयटक जल्दी जल्दी पहाडी से नीचे उतर रहे थे। ऊपर चढने वाला शायद मैं अकेला ही था।

मैं किले की दिवार पर आकर खडा हो गया, जहा कुछ दिन पहले रूपसी के आचल की मुझे प्रथम छुअन मिली थी। आज मैं यहा आकर भयभीत नहीं था। मैं वेफिक्र होकर रूपसी के आन का इतजार करने लगा। मुझे अधिक समय तक इतजार नही करना पडा। भीनी भीनी खुशबू आई थी और साडी के आचल ने मरी पीठ छुई थी। मैंने मुड-कर देखा, मेर ठीक बगल म रूपसी खडी थी। वह मन्द-मन्द मुस्करा रही थी, खुश नजर आ रही थी। शायद मेरे समय पर पहुच जाने से वह प्रसन्न थी।

' मैंने देर तो नही कर दी ?"

"नही !" रूपसी ने मरा हाथ पकडा और कहा, "चलो, किले के

अदर चलत ह । " उसन मुझे दीवार से नीचे उतार लिया ।

हम दोना धीम कदमा स किले की आर बढ चले । रूपसी के हर कदम साथ उसके पैरा की पायल छम छम ' आवाज कर रही थी । उसन आज गहर हर रग की साडी पहन रखी थी । अपन लम्बे वाला को विशिष्ट पद्धति से गूथकर उसन लम्बी चोटी बना रखी थी । ऐसा केश विन्यास मैंन इसके पूव कही नही दखा था । वशवर्तिका रूपसी के उभरे हुए नितम्बो पर झूल रही थी । उसकी बडी बडी सीपनुमा पलकें काजल से अभिभूत थी । गुलाब की पखुडियो-सरीखे पतले-पतले अधर भी अधिक रसील लग रहे थे । गोरी बाह आभूषणा से लदी हुई थी । धवल सग ममरी गालो से स्निग्धता रिस रही थी । बल खाता हुआ कटि प्रदेश मादकता उत्पन्न कर रहा था । वह एसे चल रही थी जैस कोई पटरानी अपन महल म चल रही हो ।

हम किले के अन्दर पहुच । वह मुझे एक खास कमरे म लाकर रुक गयी ।

किले का यह कमरा आकार मे सामान्य होते हुए भी अपनी कुछ विशिष्टता लिय हुए था । कमरे के ठीक मध्य मे एक कुण्ड बना हुआ था । मन सुन रखा था कि बीत वक्त म रानिया इस कमर म स्नान किया करती थी । कुण्ड मे गम और ठडा दोनो तरह के पानी आने की व्यवस्था थी । रानिया नहाकर शृगार भी इसी कमरे म किया करती थी । इसके लिए तब पूरी व्यवस्था रही होगी । दीवार म बना हुआ खाचा आज भी यह बताता है कि किसी समय यहा एक आदमकद शीशा लगा हुआ था ।

कुछ क्षणा तक रूपसी कमरे को अपलक नजरो से निहारती रही, फिर धीरे धीरे चलकर कुण्ड म जाकर बैठ गयी । दखत ही दखते कमर का रूप बदल गया । कुण्ड मे कल-कल करता हुआ पानी आ गया । अपन आप ही खाचे मे शीशा जड गया और अनेक प्रकार के वस्त्र आभूषण और शृगार के सामान कमरे म सज गय । वह बिल्कुल एक पटरानी

के महल का कमरा हो गया था। मेरे अचरज का कोई ठिकाना न था।

रूपसी बडे इत्मीनान से कुण्ड म नहाने लगी। उसने अपने बालों को खोलकर मुक्त कर दिया था। जल टूट-टूट कर मोती की शक्ल में बालों से नीचे रिस रहा था।

मैं ठगा सा चुपचाप यह सब देखता रहा।

स्नान कर चुकने के बाद उसने चंदन की पटी खोलकर इत्र, कंघी तेल आदि निकाल और आदमकद शीशे के सामने बैठकर शृंगार करने लगी।

उसने नये वस्त्र पहने, पलकों पर नया काजल लगाया, नये आभूषण पहने, माथे पर बडी-सी बिंदिया लगायी और फिर आदमकद शीशे में अपने रूप को निहारा। अपने ही अनुपम सौंदर्य को देखकर वह मुस्करा पडी। उसने मुझे कोने में तिपाई पर पडी चांदी की डिबिया उठाकर देने को कहा। मैंने डिबिया उठाकर रूपसी को दे दी। डिबिया खोलकर उसने चुटकी भर सिंदूर निकाला और अपने माथे के पास ले गयी।

"नहीं ।" एकाएक चीखकर रूपसी ने सिंदूर दूर फेंक दिया। सिंदूर सारे कमरे में बिखर गया। कमरे की समस्त दीवार, छत, फर्श, कुण्ड का पानी, आदमकद शीशा, कमरे में रखी हर वस्तु सुर्ख लाल हो गयी। स्वयं रूपसी भी नख शिख लाल अंगारे की तरह दीखने लगी। लाल रंग की तीव्रता बढती चली गयी। मैं यह तीव्रता बर्दाश्त नहीं कर पा रहा था। मेरे लिए कमरे में और अधिक समय तक खडा रहना असम्भव-सा हो गया। मैं दौडकर किले के बाहर आ गया। किले के पिछवाडे वाले द्वार के पास आकर मैं रुक गया। मैं बहुत बुरी तरह से हांफ रहा था।

कुछ देर बाद धीमे धीमे कदमों से रूपसी भी बाहर आ गयी। जो विकरालता कमरे में उसके चेहरे पर आ गयी थी वह अब नहीं रही थी। उसका चेहरा सामान्य हो चुका था और वह पूर्ववत हरी साडी में लहलहा रही थी। मुझे यह सब एक स्वप्न जैसा लग रहा था।

रूपमी चुपचाप मेरे करीब आकर खड़ी हो गयी। उसने अपनी साड़ी से मेरे घबराये हुए चेहरे के पसीने को पोछा और फिर हाथ पकड़ कर मुझे सामने की ओर ले गयी।

एक बड़ी चट्टान के पास आकर वह रुक गयी। रूपसी ने मुझे चट्टान पर बैठ जाने का इशारा किया और वह स्वयं भी उस पर बैठ गयी।

'देख लिया न तुमने, सिंदूर मुझे कभी रास नहीं आया। जब जब मैंने अपनी माग सिंदूर से सजानी चाही वह छिटक गया। आज भी मैं सिंदूर माग में नहीं भर पाई। बोलो, मैं कब तक तरसती रहूगी? कब तक इस तरह भटकती रहूगी मैं?

तुम किस के लिए भटक रही हो?

ओह! अभी भी तुम्हें कुछ याद नहीं पड रहा है। तुम्हें यह कमरा क्या याद नहीं पड़ता? तुम ही ने तो उस दिन यहा बैठकर घटों सितार बजाया था। तुम्हारे सामने ही तो मैंने नहाकर इसी कमरे में अपने वस्त्र बदले थे। तुम्हीं ने तो उस रात मुझे इस किले की कैद में से निकाला था।

'मैंने निकाला था!'

'हा, तुमने ही तो मुझे मौत के मुह में से निकाला था। बहुत बड़ा जोखिम उठाकर। तुमने अपनी जान की परवाह न करके किले की कैद में से मुझे मुक्त कराया था। इस जघन्य अपराध के लिए तुम्हें मौत की सजा भी हो सकती थी। थोड़ा रुककर वह पुन बोली, 'मैं रात के अधियारे में ही पैदल पैदल रामगढ चली गयी थी। क्या तुम्हें कुछ याद पड़ता है?"

मुझे तो कुछ भी याद नहीं पड रहा है। मुझे तो यह याद नहीं कि मैंने कभी इस कमरे में सितार बजाया था और तुमने मेरे सामने वस्त्र बदले थे। मुझे यह भी याद नहीं कि तुम यहा कैद थी। मैंने तो पहली बार कल तुम्हें आमेर में देखा था।'

"क्या कहा, कुछ भी याद नही पडता ? अरे, उस रात यही हम दोनो ने मिलकर खूब गाया भी था और तब तक गाते रहे थे, जब तक सारे प्रहरी सो नही गये थे। "

" नही! मुझे ऐसा कुछ भी याद नहीं आ रहा है।"

मेरी बात से रूपसी उदास हो गयी। फिर वह बुदबुदायी " तुम्हे भी कुछ याद नहीं, वे भी मुझे भूल गये आखिर मैं कब तक भटकती रहूगी ? "

कुछ क्षणो तक हम दोनो मौन रहे।

फिर रूपसी अपने चेहरे पर दृढता लाते हुए बोली, " बडी मुश्किल से तो तुम मुझे मिले हो। अब मैं तुम्हे सहज मे नही खो दूगी। आज मैं तुम्हे सब कुछ याद दिलाकर छोडूगी। सुनो, मैं तुम्हे आरम्भ से अन्त तक वे सारी बाते बताती हू, निश्चित ही तब तुम मुझे पहचान जाओगे।

रूपसी ने कहना शुरू किया—

" आमेर के राजा भगवानदास ने अपनी बेटी का विवाह मुगल बादशाह से कर रखा था। भगवान दास का दत्तक पुत्र मानसिंह वीर एव कुशल सेनापति था। उसके पराक्रम की तूती दूर दूर तक बोलती थी। इस नाते मानसिंह ने बादशाह अकबर के दरबार मे विशेष स्थान प्राप्त कर लिया था और शहशाह अकबर ने मुगल सेना के बहुत बडे हिस्से की बागडोर मानसिंह को सभला दी थी। जहा कही विद्रोह होता, मानसिंह को वहा भेज दिया जाता। वह हमेशा विजय का नगाडा बजाता हुआ लौटता। मानसिंह ने मुगल सल्तनत के लिए बगाल, आसाम, बिहार, दक्षिण और काबुल मे अनेक युद्ध लडे। अनेक शासको को पराजित कर मानसिंह ने चारो दिशाओ मे दूर-दूर तक मुगल साम्राज्य को फैलाया। इन लडाइयो मे अपार सम्पत्ति मानसिंह के हाथ लगी। काबुल से तो वह अतुल सपदा ऊटो के काफिले पर लाद कर जयपुर लाया था। इस तरह धीरे धीरे जयपुर के राजमहल मे बेहिसाब सम्पत्ति का जखीरा जमा हो गया।

"जब शहशाह अक्बर वद्धावस्था को प्राप्त हुए तो दिल्ली म उत्तराधिकारी के लिए सघष छिड गया। उस समय मानसिह ने चाहा कि उसकी बहिन का लडका खुसरो गद्दी पर बैठे। इसके लिए उसने जब दस्त प्रयत्न भी किय। मानसिह का मुगल सेना और सरदारो पर बहुत ज्यादा दबदबा था। इसके अलावा उसके पास बीस हजार राजपूतो की शक्तिशाली सना भी थी। मानसिह अपने उद्देश्य म लगभग सफल हो गया था कि तभी शहशाह अक्बर ने दस करोड रुपयो की (आज की तारीख म अरबो रुपय की) विशाल राशि दकर उसे उत्तराधिकार के सघष से विलग कर दिया। शहशाह अक्बर नही चाहते थे कि उनकी राजपूतनी रानी की कोख से जन्मा राजकुमार दिल्ली के तख्त पर बठे।

"यह विपुल राशि भी जयपुर के खजाने म आकर जमा हो गयी।"

"मानसिह के बाद भावसिह और फिर महासिह जयपुर की राजगद्दी पर बैठे। ये दोनो राजा मानसिह की तरह पराक्रमी न होकर उल्टा विलासी मदिरा प्रेमी और अयोग्य राजा सिद्ध हुए। इन्होने जयपुर के खजान म कोई उल्लेखनीय वद्धि नही की।

'महासिह के बाद मिर्जा राजा जयसिह आमर की गद्दी पर बठे। यह योग्य शासक थे। इन्ह मुगल दरबार मे छ हजारी मनसब का पद प्राप्त था।

मिर्जा राजा जयसिह ने अपने पराक्रम की धाक जमायी, अनेक युद्धो मे विजयी रहकर उन्होने जयपुर के खजाने मे पुन वद्धि शुरू की। मिर्जा राजा जयसिह का शौय मुगल शहशाह औरगजेब को नासूर की तरह तक-लीफ देने लगा। औरगजेब ने इस काटे को हमेशा के लिए समाप्त कर देने की सोचकर एक घिनौनी चाल चली। मिर्जा राजा जयसिह के दो पुत्र थे—रामसिह और कीरत सिह। औरगजेब न कीरत सिह को जयपुर का राजा बनाने का झासा दकर गुमराह कर दिया। और इसी बेटे न अफीम के साथ जहर देकर पिता की हत्या कर दी। परन्तु अपने पिता की हत्या करन वाले कीरतसिह को औरगजेब ने जयपुर के सिहासन पर नही

बैठाया और उसे केवल कामा की जागीर देकर ही सतुष्ट कर लिया।

मिर्जा राजा जयसिंह के बाद रामसिंह और उसके बाद विशनसिंह जयपुर की गद्दी पर बैठा। इन दोना राजाओ ने अपने पूर्वजो द्वारा इकट्ठी की गयी सम्पत्ति के जखीर को किसी तरह शत्रुओ की नजरो से बचाये रखा।

"विशनसिंह के बाद सवाई जयसिंह गद्दी पर बैठा।

"सवाई जयसिंह विद्वान एव योग्य शासक होने के साथ साथ पराक्रमी भी था। उसने दक्षिण मे कई युद्ध जीते और बेशुमार सम्पत्ति अर्जित की।

"सवाई जयसिंह के गद्दीनशीन होने के छ वर्ष बाद मुगल शहशाह औरगजेब की मृत्यु हो गयी। दिल्ली म गद्दी के लिए पुन सघर्ष छिड गया। शहजादा बेदार बख्त और शाह आलम ने दिल्ली की सल्तनत पर अपना-अपना हक जताया। दोनो ने युद्ध के बिगुल बजा दिय। सवाई जयसिंह ने बेदार बख्त का साथ दिया। धौलपुर के पास मुगल साम्राज्य के दोना दावेदारो म जमकर युद्ध हुआ। युद्ध मे बेदार बख्त मारा गया। और आलम शाह विजयी हुआ।

"चूकि जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह ने गद्दी के सघर्ष म बेदार बख्त का साथ दिया था, इसलिए शहशाह आलम शाह उससे सख्त नाराज हो गया। उसने जयपुर पर आक्रमण के लिए मुगल सेना भेज दी। राजपूतो ने मुगल सेना का डटकर मामना किया और उसे पराजित करके दिल्ली की तरफ खदेड दिया। मुगल सेना की पराजय से सवाई जयसिंह की धाक जम गयी और वह निडर होकर जयपुर का शासन करने लगा।

'सवाई जयसिंह को आमेर की पहाडियो के बीहड म बसे शहर से सतोष नही हुआ। उसने पहाडियों की दूसरी तरफ के समतल मैदान के जगल को कटवा कर वहा एक नया शहर बनवाया। विद्याधर-जैसे कुशल शिल्पी की मदद से उस समय के बत्तीस करोड रुपयो से नये शहर जयपुर का निर्माण पूरा हुआ।

"परन्तु जयपुर शहर बसाने मे जितना धन खजाने मे से निकाला

गया उमस कही अधिक खजाना सवाई जयसिह के शासन के दौरान उम खजाने म जमा किया गया। इस तरह जयपुर के खजाने म निरतर वद्धि होती रही।

सवाइ जयसिह ज्योतिप विद्या का भी प्रकाण्ड पडित था। उस चद्र सूय और दूसर ग्रह-नक्षत्रो का अच्छा नान था। उसन ज्योतिप के अनेक यत्रा का आविष्कार किया। सवाई जयसिह द्वारा दिल्ली, जयपुर, उज्जैन, वाराणसी और मथुरा म बनवाए गय 'मानमन्दिर' म उनके समस्त ज्योतिप-यत्र अब भी वहा सुरक्षित रखे है।

सवाई जयसिह द्वारा ज्योतिप-यत्रो का निमाण सात वर्षों तक चलता रहा। वाद म जब उसे सूचना मिली कि समरकद म ज्योतिप सबधी कुछ विशिष्ट यत्रो का निर्माण किया गया है तो सवाई जयसिह ने समरकद के राज-ज्योतिषी उलगवेग द्वारा बनाय गये व यत्र जयपुर मगवाय परन्तु इन यत्रो का प्रयोग किए जाने पर इन्ह सतापप्रद नही पाया। तभी जयसिह का पता चला कि पुतगाल मे भी ज्योतिप विद्या पर अच्छा काम हुआ है। उसने पुतगाल के ज्योतिषी मिशनरी पादरी मैनुल का जयपुर आने के लिए आमत्रित किया। चूकि पादरी अपने बनाये हुए ज्योतिषी यत्र अपने साथ नही लाया था इसलिए अपने यहा के कुछ ज्योतिप विद्वानो को पादरी द्वारा निर्मित यत्रो का अध्ययन करने के लिए सवाई जयसिह ने उन्ह पुतगाल भेजा। सवाई जयसिह के ज्योतिप प्रेम से पुतगाल का महाराजा बहुत प्रभावित हुआ। उसन अपने राजकोप से व्यय करके जवियर डी सिलवा नामक व्यक्ति के साथ पुतगाल के महान ज्योतिषी डिला हायर के बनाये हुए ज्योतिप-यत्र जयपुर भिजवाय। कालान्तर म इन यत्रो स सवाई जयसिह को भविष्यफल नात करने म काफी सहायता मिली।

एक दिन जयपुर के ज्योतिप-यत्रालय म सवाई जयसिह ज्योतिप-विद्या द्वारा अपनी भावी पीढ़ियो का भविष्य दस परख रहा था। जो 'भविष्य फल' उसे नात हुआ उसस वह निहायत चितित हो उठा। अगले ही

दिन सवाई जयसिंह ने अपन विश्वस्त सामता की एक गुप्त सभा बुलाइ और उन्हे बताया 'मेरा ज्योतिष ज्ञान कह रहा है कि हमारी आने वाली पीढी *अत्यन्त कष्ट मे रहगी। आन वाले शासक अधिक योग्य सिद्ध नही* होग। उनमे आवश्यक विवेक का अभाव रहगा आर असीम विपदाओं स व घिरे रहगे। राजकोष के लूटे जान की भी सभावना है। अत मैं अपनी भावी पीढिया के लिए पर्याप्त धन सुरक्षित रख दना चाहता हू।'

"सामन्तो मे गभीर मत्रणा हुई और खजाने को छुपाकर गुप्त स्थान म गाडे जान की एक अत्यन्त गोपनीय योजना बनाई गई।

'खजाना गाडन का काय अमावस्या की आधी रात को शुरु किया गया। मजदूरो की आखो पर पट्टिया बाध कर उन्ह हर राज घुमावदार मार्गो से खजाना गाडे जाने वाले स्थान पर ल जाया जान लगा और दो महीना के अथक परिश्रम के बाद बडे ही तिलिस्मी ढग से 'खजाना' जमी-दोज किये जाने का काय सम्पन्न हुआ।

'*कहा जाता है, खजाना गाडे जाते समय एक बार एक सामत की* नीयत मे फक आ गया और वह चोरी चोरी खजाने के रास्त का बीजक (नक्शा) बनान लगा। गुप्तचरा से इस बात का पता चलत ही जयसिंह ने खजाना गाडे जाने वाले स्थान पर पहुचकर उस सामत का वध कर दिया।

'कहते ह, उस सामत की तडपती हुई आत्मा ने जयसिंह को शाप दिया और खजान का असली बीजक जो स्वय सवाइ जयसिंह ने बनाया था एकाएक रहस्यमय ढग से खो गया। उस समय सवाई जयसिंह बीमार था। बीजक बहुत ढुढवाया गया, पर नही मिला। जयसिंह ने पलग स उठन के बाद अपनी याददाश्त के आधार पर पुन नया बीजक बनाने की सोची परन्तु वह पलग से उठ ही नही सका और लम्बी बीमारी के बाद, बिना नया बीजक बनाये ही उसने दम ताड दिया।

"जसा कि ज्योतिष म फलित हुआ था सवाई जयसिंह के बाद जय पुर राज्य के सिंहासन पर बैठने वाला उसका लडका ईश्वरीसिंह योग्य

शासक सिद्ध नही हुआ। वह पराक्रमी भी नही था। सन १७४७ ई० मे अब्दाली से युद्ध करने के लिए वह सतलुज नदी के किनारे पहुचा जरूर था परतु करारी हार खाकर वापस जयपुर लौट आया। इस युद्ध की पराजय से उसकी प्रतिष्ठा का काफी धक्का पहुचा। युद्ध मे धन जन की भी व्यापक हानि हुई। ईश्वरी सिंह इस झटके को बर्दाश्त नही कर सका। वह दिन प्रतिदिन कमजोर होता गया। इसी बीच उसके सौतेले भाई माधोसिंह ने जयपुर की गद्दी पर अपना हक जताया और विद्रोह कर दिया।

माधोसिंह स्वर्गीय जयसिंह की उस रानी की सतान था, जिसकी मेवाड के राणा ने जयसिंह के साथ इस शर्त पर शादी की थी कि राणा वंश की राजकुमारी से विवाह के बाद यदि उसकी कोख से लडका हुआ तो वह ही जयपुर का राजा बनेगा और यदि लडकी पैदा हुई तो वह किसी भी सूरत मे मुगलो को नही ब्याही जायेगी।

'और माधोसिंह ने इसी शर्त के आधार पर अपने को जयपुर का राजा घोषित कर दिया। उसने ईश्वरीसिंह को युद्ध के लिए ललकारा। मेवाड के राणा तथा कोटा और बूदी रियासतो के शासको ने माधोसिंह के साथ मिलकर राजमहल नामक स्थान पर ईश्वरीसिंह से युद्ध किया। इस युद्ध मे ईश्वरीसिंह विजयी अवश्य हुआ परन्तु अपार धन जन की हानि हुई होने के कारण जयपुर का राजकोष काफी हद तक खाली हो गया। ईश्वरीसिंह इस सबसे बेखबर जीत के उन्माद मे अय्याश बन गया। यहा तक कि वह अपने ही मत्री की बेटी पर आसक्त हो गया। उस तरुणी का नित्य छत पर खडी हुई दर्शन भर के लिए उसने ईसरलाट का निर्माण करवा गया। यह ईश्वरीलाट जयपुर के मुख्य बाजार त्रिपोलिया मे छोटी कुतुबमीनार की तरह आज भी खडी है।

उधर माधोसिंह युद्ध मे हारकर भी निराश नही हुआ था और न ही हार से उसके हौसले पस्त हुए थे। उसने अपनी शक्ति और सेना को पुन सगठित किया। होल्कर ने उसने सधि करके उसकी सहायता भी

प्राप्त कर ली और दुबारा सेना लेकर जयपुर पर आक्रमण कर दिया। विलासिता में डूबा हुआ ईश्वरीसिंह हार गया। माधोसिंह जयपुर का नया शासक बना।

'माधोसिंह द्वारा जयपुर के शासन की बागडोर सभालने तक जयपुर राज्य का राजकोष खाली हो चुका था। माधोसिंह के सामने भयकर आर्थिक सकट उत्पन्न हो गया। उसने अपने पिता सवाई जयसिंह द्वारा जमीदोज खजाने की खोज करने की सोची।

"उन सामंतो को बुलाया गया जिनकी देख रेख मे खजाना जमीदोज किया गया था। सामन्तो ने माधोसिंह को बताया कि वे खजाने के बारे में कुछ भी नही बता सकते क्योकि खजाने को जमीदोज किये जाने का बीजक (वर्णनात्मक नक्शा) स्वय स्वर्गीय महाराजा जयसिंह ने तैयार किया था और उन्होने बीजक किसी को भी नही दिखाया था। सामन्तो को भी मजदूरो की ही तरह आखो पर पट्टी बाधकर खजाना दफनाये जाने वाले स्थान पर ले जाया जाता था। सामतो को अलग अलग दिशा मे ले जाकर हर एक से एक हिस्से की ही सुरग खुदवायी गयी थी जिससे सुरगो का सिलसिला गडबड हो जाने से किसी की भी समझ मे नही आया था।

"माधोसिंह को सामतो से खजाने के बारे मे कुछ भी अता पता नही चल सका। तब माधोसिंह ने खोये हुए बीजक की तलाश शुरू करवायी। चन्द्रमहल और जयगढ का चप्पा चप्पा छान मारा गया, पर बीजक का कही पता नही मिला। कुछ नकली बीजक अवश्य मिले जो स्वर्गीय महाराजा जयसिंह ने मात्र दुश्मनो को गुमराह करने के लिए बनवा रखे थे।

'महाराजा माधोसिंह अपने सत्रह वर्ष के शासन के दौरान दबे हुए खजाने की तलाश पूरी सरगर्मी से कराता रहा। खजाना ढूढते-ढूढते ही वह परलोक सिधार गया।

"माधोसिंह के बाद उसका बडा पृथ्वी सिंह जयपुर की गद्दी पर बैठा परन्तु वह अधिक दिनो तक राज नही कर सका। एक दिन एकाएक घोडे

स गिरकर वह मर गया। तब उसका छोटा भाई प्रताप सिंह गद्दी पर बैठा।

"जयपुर रियासत की माली हालत दिन प्रतिदिन बद स बदतर होती जा रही थी। राजकोष म कमी आ जाने की वजह स प्रताप सिंह को सेना के खच म भारी कटौती करनी पड गई। जयपुर की शक्ति को क्षीण हुआ देखकर कुछ महत्त्वाकांक्षी सरदारा न सिर उठाने शुरु कर दिय।

'फिर तो प्रताप सिंह की शक्ति विद्रोही सरदारा को दबान म ही लग गयी। उसी समय जयपुर क प्रधानमंत्री खुशहालीराम न एक जबरदस्त चाल खेली। खुशहालीराम धूत और कपटी स्वभाव का व्यक्ति था। वह प्रताप सिंह को मरवाकर खुद जयपुर का राजा बनना चाहता था। उसने गुप्त रूप से मुगलो के साथ साठ–गांठ कर ली। बडी धूर्तता के साथ खुशहालीराम न जयपुर से माचेडी रियासत निकलवाकर मुगलो को सौंप दी। माचेडी रियासत जयपुर के राजस्व पूर्ति का सबसे बडा स्रोत थी।

"माचेडी मिल जाने से मुगल बादशाह बहुत खुश हुआ। उसने प्रताप सिंह का तख्ता पलटन के लिये हमदानी खाँ के नेतृत्व म शाही सना जय पुर भेजी।

'खुशहालीराम न प्रहरियो को धन देकर पहल स ही अपने पक्ष म कर रखा था। मुगल सेना के जयपुर पहुचते ही रात म प्रहरियो ने शहर के मुख्य द्वार खोल दिय। मुगल सेना जयपुर शहर मे घुस आई। सैनिको न कत्ले-आम शुरु कर दिया। रात म गहरी नींद म सो रहे निहत्थे लोगो को वे मारने काटने लग। मुगल सना ने जबरदस्त लूट मचा दी।

"महाराजा प्रताप सिंह को रात म जगाया गया और मुगल सेना के आक्रमण की उसे सूचना दी गयी। प्रताप सिंह खुद अपनी वफादार सना को लकर मुगल सना का सामना करन महल क बाहर आ गया। अपने पराक्रम स उसने मुगल सना को मार भगाया।

' मुगल सना जयपुर छोडकर चली तो गयी पर वह जात-जात

काफी नुकसान कर गयी। इसस राजकोष पर और भी अधिक दबाव पड गया।

'प्रताप सिंह ने सरदारो की आपात सभा बुलायी। सरदारो न महाराजा के कहन पर पुन एक बार पूवजो द्वारा जमीदोज खजाने की खोज शुरू की। दो वर्षों तक लगातार खजाना ढूढा जाता रहा पर कोई सुराग नही मिला। महाराजा प्रताप सिंह भी खजाना दखन की तमन्ना लिय ही स्वग सिधार गया।

' प्रतापसिंह के बाद १८०३ मे उसका बटा जगतसिंह ' कहत कहत रूपसी रुक गयी। रूपसी क चेहरे पर एकाएक बबसी, विषाद, क्षोभ के भाव उभर आए थे। उसकी आखें तरल हो गयी थी। वह अपन आतरिक दद को दबात हुए बडी कठिनाई से बोल पायी, 'उसका बटा जगतसिंह जयपुर की राजगद्दी पर बैठा।'

अब रूपसी चुप हो गयी थी।

रूपसी कौन है? यह तो अभी तक स्पष्ट नही हो पाया था, पर यह स्पष्ट हो गया था कि रूपसी जयपुर के इतिहास की ही एक कडी है। उसका जयपुर राजघरान से अवश्य कोई घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, तभी तो वह चन्द्रमहल, नाहरगढ और जयगढ किले मे लगे एक एक पत्थर का इतिहास जानती ह। उसने अवश्य ही चन्द्रमहल, जयगढ और नाहरगढ किले म निवास किया है। फिर उसकी माग मे सिंदूर क्यो नही भरा जा सका?

रूपसी ने राजसुख भोगा तो होगा, पर सम्भवत वह सुख पूणता को प्राप्त होन क पूव ही खण्डित हो गया होगा।

महाराजा जगतसिंह का उल्लेख आते ही वह विचलित क्यो हो गयी ह? उसकी आखो से दो बूद आसू भी तो टपके हैं! क्या य आसू उस खण्डित सुख की वदना को व्यक्त कर रहे ह।

एकाएक रूपसी ने कहा, चलो!'

"कहा।"

' तुम्हार घर !

" मेरे घर ? वहा तुम कैसे चलागी ? क्या तुम सासारिक दुनिया म चलागी ?

नही, उस घर मे नही तुम्हार असली घर म । उठो !"

मैं हतप्रभ-सा उठकर खडा हो गया और हम नाहरगढ के पिछवाडे की ओर चल पडे।

आमेर महल का प्राचीन परकोटा आ गया था। परकोटा पार कर हम जयगढ की ओर जा रहे थे।

रास्ता ऊबड खाबड था। चुपचाप मौन चलना मुझे अखर रहा था। मैंन रूपसी के बार म अधिक स्पष्ट रूप से जानन के प्रयोजन से कहा, महाराजा जगतसिंह की तो सोलह रानिया थी न ?"

हा ! ' रूपसी न सक्षिप्त सा उत्तर दिया। उसन यह नही बताया कि वह भी उन सोलह रानियो म से एक थी या नही !

महाराजा जगतसिंह का उल्लख आते ही वह पुन बोली, "व बहुत भावुक प्रकृति के आदमी थ। अल्पायु मे ही उन पर शासन की जिम्मदारी आ पडी थी। व जब जयपुर के महाराजा बने थ उस समय मात्र सत्रह वष क थे। महाराजा के अल्पायु होने और उनकी भावुक प्रकृति होने का सरदारो मन्त्रियो न बडा ही नाजायज फायदा उठाया। सरदारो ने महाराजा जगतसिंह को कभी चैन से राज करने नही दिया। वह हमशा हुडदग मचाय रहत थ। नित-नया बखेडा खडा कर दत थ। अनक बार व महाराजा को गुमराह करन म सफल हो गय। इसी गुमराही का मैं भी शिकार बनी कहकर रूपसी पुन चुप हो गयी।

फिर वह स्वय ही महाराजा की प्रशसा म बोली ' उन्ह अनक युद्ध लडन पडे थे। गिंगोली म हुए युद्ध म तो उन्होने जोधपुर क महाराजा मानसिंह को बडी शिकस्त दी थी। यह लडाई उदयपुर की अत्यत सुन्दर राजकुमारी कृष्णाकुमारी को पान क लिए हुई थी।

क्या उदयपुर की राजकुमारी कृष्णाकुमारी तुमस भी ज्यादा

सु-र थी ? " मैंने पूछा ।

उसके अधरा पर एक विजित मुस्कान तैर गयी " नही ! महाराजा जगतसिंह न एक बार कहा था मैं कृष्णाकुमारी से सहस्रगुणा सुन्दर हू । ' वह प्रफुल्लित हाते हुए बाली 'सच' उन्हाने कहा था तुम विश्व सुन्दरी हो !"

मैं साच रहा था, अगर महाराजा जगतसिंह न इस सुन्दरी को 'विश्व-सुन्दरी' का खिताब दिया था, तो काई अतिशयोक्तिपूर्ण बात नही कही थी । उदयपुर की राजकुमारी कृष्णाकुमारी भी अवश्य सुन्दर रही होगी जिसके कारण जयपुर जाधपुर म भयकर युद्ध छिडा परन्तु यह भी तय है कि इस रूपसी के सौन्दय न भी उस काल म काफी धूम मचायी होगी ।

जयगढ आ गया था । रूपसी रुक गयी । उसन बायी आर से नीच उतरने का इशारा किया । अधर मे मुझे कोई रास्ता या पगडडी दिखायी नही द रही थी । मैं रूपसी के निर्देशानुसार चल रहा था । रूपसी न मरा हाथ पकड रखा था ।

हम एक टूटी हुई दीवार के पास आकर रुक गये । दीवार किसी खडहर हो रहे मकान की थी । सैकडा बारिशो के थपेडा से ढह रहे इस मकान के सम्भवत एक दा कमर अभी भी ढहने शेष थ ।

रूपसी मुझे लिय हुए दीवार के सहार चलन लगी । परा के नीचे ढहा हुई दीवारा का मलबा बिखर कर आवाज कर रहा था । मैं एक बार फिर चौंक पडा । रूपसी के पैरा के नीचे मलब के बिखरने की आवाज नही हा रही थी, जसे पत्थरा पर काई रुई का पुतला चल रहा था ।

मैं बहुत थक गया था । थाडा सुस्ताने के प्रयाजन स मैंने अपनी पीठ दीवार के साथ टिका दी ।

नहीं !" चीखते हुए रूपसा न एक झटके स मुझे खीच लिया । धडधडाता हुआ ऊपर स मलबा नीच आ गिरा । मैंने जिस दीवार से

अपनी पीठ टिकायी थी वह इतनी कमजोर हो चुकी थी कि मात्र इतन ही दबाव से ढह गयी। रूपसी ने मेरा जान बचा ली थी। मैं डर गया और इस खडहर मकान के अन्दर जाने म इन्कार कर दिया। रूपसी के इस आश्वासन पर कि उसके रहत मेरा किसी भी प्रकार का अनिष्ट नहीं हो सकता, मैं मकान के अन्दर चला आया।

गलियारे से होते हुए हम एक हाल मे पहुचे जिसकी एक दीवार और छत ढह चुकी थी, सिर्फ तीन दीवार खडी थी। रूपसी ने मेरा हाथ छोडा और वही खडा रहने के लिए कह कर वह अन्दर चली गयी।

थोडी देर म मुझे दायी ओर से प्रकाश की किरणें आती हुई दिखायी दी। रूपसी ने अन्दर मशाल जला ली थी।

मैं प्रकाश की ओर बढ गया।

अन्दर पहुचकर मैं अवाक् रह गया। कमरा साज-सामान से भरा-पूरा और सजा हुआ था। इतना सारा सामान अभी तक यहा कैसे मौजूद है इसका मुझे आश्चर्य हो रहा था।

छम छम करती हुई रूपसी मेरे नजदीक आ गयी।

'मैंने रोशनी कर दी है जय!"

जय? यह किसके लिए सम्बोधन था? मेरा नाम तो जय था नही। मैंने मुडकर देखा, वहा मेरे और रूपसी के अतिरिक्त कोई नही था।

रूपसी ने मेरे गाल को अपनी हथेली से घुमाते हुए कमरे मे रखे सामान की ओर इशारा करते हुए कहा, मैंने तुम्हारा सारा सामान सभाल कर रख छोडा है जय! देखो सब सही है न?"

मेरी समझ मे कुछ नही आ रहा था।

रूपसी ने मशाल उठायी और मेरी बाह पकडकर दूसरे कमरे म ले गयी।

दूसरे कमरे म पहुचकर मेरा मस्तिष्क चक्कर खाने लगा। एक अजीब सी धुन्ध मेरी आखो से हटने लगी। कमरे म रखी वस्तुए मुझे जानी पहचानी-सी लगने लगी। मैं दौड दौड कर एक-एक वस्तु को छूकर

दमकने लगा। कमरे में रखा हुआ पलग, कुर्सी, मेज, दीवार पर लगी खूटी पर टगी पोशाकें, चादी की सुराही, पीकदान, कमरबन्द आबनूस का बक्सा और तिपाही पर रखा हुआ सितार—सब कुछ मैंने पहिचान लिया। यह सब मेरा था।

यह सितार मेरा है " मैं जोर से चिल्लाया। "मैं ही इसे बजाया करता हूं।"

"हा ! यह सितार तुम्हारा ही है। तुम ही इसे बजाया करते हो ! तुम यह सितार बजाते हो, मैं नाचा करती हू। जय ! बजाओ सितार! सितार बजाओ, मैं नाचूँगी।'

मेरे हाथ मन्त्र मुग्ध अपने-आप सितार पर चले गये। उगलियो ने तारो को छेड दिया। सारा कमरा सगीत से झकृत हो उठा। रूपसी के पाव स्वय ही सितार के तारो की स्वर-लहरी मे थिरकने लग गये। वह नाच रही थी मैं सितार बजा रहा था। अचानक मैं चिल्लाया, "रसकपूर !"

रूपसी ने नाचना बन्द कर दिया। वह मेरे करीब आ गयी। "ठीक ! तुमने बिल्कुल ठीक पहिचाना। मैं रसकपूर ही हू। और तुम तुम "

"मैं जयराज हू, गुणीजनखाना का मुखिया !"

"हा ! बिल्कुल ठीक स्मरण हुआ जय !"

"यह यह तो मेरा ही घर है !"

"बिल्कुल ठीक ! यह वही घर है जिसमे तुम रहा करते थे।"

"इसे तुमही ने बनवाकर मुझे दिया था !"

'हां ! उस समय मैं आधे जयपुर की मलिका थी। अब तो तुम्हे सब याद पड रहा है न ?

"वह शरद-पूर्णिमा की रात ! याद है न ? जिस रात तुमने पहली बार मुझे महाराजा जगतसिंह के रूबरू कराया थे। तुमने सितार बजाया था और मैं नाची थी। यही है वह सितार ! उस रात मैं खूब नाची थी, गायी थी। महाराजा बहुत खुश हुए थे और उन्होंने

थे। रानिया के लिए नय आभूषण बनवाये गय थे। इनके निए तरह्-तरह् के कीमती इत्र मगवाय गये थे। इस अवसर पर महाराजा की तरफ से रानिया को स्वणथाला म और परदायता एव पासवाना को चादी के थाला म विशेप उपहार भेजे गय थे।

चद्रमहल मे महफ्लि का आयाजन 'मुकुट महल' म किया गया था। अपने-अपने ढग से सजकर रानिया, परदायतें, और पासवानें मुकुटमहल मे आकर अपने-अपने निर्धारित भरोखो के पीछे आकर बैठ गयी थी। जिन्ह अद्ध रानी की हैसियत व अधिकार प्राप्त थे वे परदायतें तथा महाराजा की सेविकाए व रखैलें पासवान कहलाती थी।

मुकुटमहल का सजान म भी काफी परिश्रम किया गया था। दीवारा पर तरह तरह के कलात्मक भित्ति चित्र बनाये गय थे। रग-बिरगी भानर लटकायी गयी थी। भाड फानूसा म सैकडा मोमबत्तिया जलायी गयी थीं। फश पर नया ईरानी कालीन बिछाया गया था। महाराजा जगतसिंह के बैठने के लिए नया सिहासन बनाया गया था।

महफिल का सफल एव मनोरजक बनाने के लिए गुणीजनखाना के मुखिया जयराज को एक माह पूव ही तयारी करने का कह दिया गया था। और जयराज ने भी महफिल का सफल बनान के लिए कोई कमर नही उठा रखी थी। उसन ढूढ-ढूढकर कलाकार एकत्रित किय थे। इसके निए वह जयपुर स बाहर भी हो आया था। कलाकारा को दिन-रात रियाज करवाकर उसन भरपूर मनोरजन का अत्यत उमदा काय क्रम तैयार कर लिया था।

पिछनी बार शरद उत्सव के आयाजन की रूपरेखा पर विचार करने के निए दीवाने-आम म आयोजित सभा म गुणीजनखाना के मुखिया जयराज ने घोषणा की थी कि वह महफिल म एक एसी सुदर नृत्यागना, सगीतज्ञ रमणी को प्रस्तुत करगा जिसके अद्वितीय सौन्दय, नत्य प्रवीणता और मधुर सगीत का सुनकर सब मुग्ध हो जाएग। जयराज न घोपणा की थी कि इस रूपवती का उसन ठीक इसी उत्सव के लिए

बडे परिश्रम स खोजा है ।

जयराज द्वारा घोषित रूपसी का सौन्दय और नत्य देखन के लिए दो दिन पूव स ही सरदारा का जयपुर मे जमघट लगना शुरू हो गया था । अपनी अपनी मूछो पर ताव दिये वाके राजपूत शायद इस अद्वितीय सुन्दरी का मन मोह लेने की फिराक मे थे ।

सिफ सरदारो मे ही नही, पूरे शहर मे महफिल म पश होन वाली रूपसी के सौन्दय की चर्चा थी ।

ठीक समय पर मुकुटमहल म सरदारा का आना शुरू हुआ । एक-दूसरे का कुशल क्षेम पूछते हुए सरदार अपन-अपने निधारित स्थाना पर बठते गय ।

लगभग एक दजन परिचारिकाएँ जो सुनहरे वस्त्रा म बहुत आकषक लग रही थी, चादी की सुराहिया मे मदिरा लिए तितलिया की तरह चारो ओर मडरा रही थी । एक वादी प्याला सरदार के हाथ म पकडा देती और दूसरी बादी झुककर अदब के साथ प्याला भर देती । चितवना के आदान प्रदान के साथ प्याले होठा से लग जाते ।

मदिरा के दौर के साथ ही हलके सगीत की स्वर-लहरी मुकुटमहल म गूज रही थी। साजिदे अपने हाथ गम करने मे व्यस्त थे ।

चोबदार ने ऊची आवाज लगायी —

'होशियार ! सरदारगण होशियार ! समस्त साजिदे—कलाकारान् होशियार ! अन्नदाता ! कृपानिधान ! राजराजेश्वर महाराजाधिराज सवाई जगतसिहजी बहादुर पधार रहे है "

सभी सामन्ता न अपन प्याले नीचे रख दिये और खडे हो गय । हाल म निस्तब्धता छा गयी । सगीत रुक गया ।

द्वार पर तैनात प्रहरिया ने भालर सरकाकर कानिश की ।

महाराजा जगतसिह प्रधानमत्री के साथ महफिल म प्रविष्ट हुए ।

सभी सरदार और साजिदे भुक गये । अपने जुडे हुए हाथ सभी अपने घुटनो पर ल गय और 'खम्मा घणी' कहते हुए ऊपर ले आए । ऐसा तीन

बार उन्होंने किया।

महाराजा के सिंहासनारूढ होते ही सब सरदार और फिर साजिंद बठ गये।

तभी गुणीजनखाना का मुखिया जयराज खडा हा गया। उसने घुटनो से ऊपर तक हाथ जोडकर लाने वाली प्रक्रिया द्वारा महाराजा का अभिवादन किया और फिर महाराजा से 'महफिल' शुरू किय जाने की आज्ञा मागी।

महाराजा ने अपना दाया हाथ कुछ ऊपर उठाकर गिरा दिया। यह सहमति का सूचक था।

साजिंदा की ओर उन्मुख होकर जयराज ने अपने दोना हाथ फलाकर गिराते हुए कहा "राग खमाज!"

सकेत मिलत ही मृदग, सारगी, नाद, सतूर, चग तानपूरा दिलरूबा, रबाब सब एकसाथ बज उठे।

महाराजा के हाथ मे उनकी विशेष बादी ने प्याला थमाया और दूसरी विशेष बादी ने उसे मदिरा से भर दिया। य दोनो बादिया ही हर वक्त महाराजा को मदिरा पान कराया करती थी। महाराजा द्वारा प्याला होठो पर लगाते ही सभी सरदारो ने प्याले उठाय और अपने-अपन होठो से सटा दिय।

सवप्रथम चार नतकियो ने एक सामूहिक नत्य प्रस्तुत किया। इसके बाद एक गायिका न गजलें पेश की। फिर आगरा से बुलायी गई तवायफ सुल्ताना ने गायन के साथ आकपक नत्य प्रस्तुत किया। सुल्ताना क सौन्दय, उसकी अदाओ और उसके थिरकते पावो को देखकर सरदार लोग झूम उठे। सुल्ताना पर चादी के सिक्का की बौछार हाने लगी। सिक्का की बारिश होत देख सुल्ताना और भी मस्ती स नाचने लगी। 'महफिल' रगत मे आ चुकी थी।

सुल्ताना नाचते-नाचते थक गयी, पर सरदार लोग 'वाह वाह' कहन मे नही थके। आखिर सुल्ताना के पाव ढीले पड गये और वह थिरकती

हुई एक तरफ को चली गयी।

जयराज खडा हुआ। उसने पुन महाराजा को कोर्निश की और सभा को सम्बोधित करते हुए बोला, "अन्नदाता! अब मैं आप लोगो के सामने ऐसी हूर की परी पेश कर रहा हू जो अद्वितीय सुदरी तो है ही, उसकी नृत्यकला का भी जवाब नही। इतना ही नहीं उसके-जैसी सुरीली आवाज भी आप मेहरबानो न अन्यत्र कही नही सुनी होगी।" फिर जयराज ने पीछे मुडकर पुकारा, "रसकपूर! आओ, अब अपनी कला का प्रदर्शन करो!" और यह कहने के साथ ही सितार स्वय जयराज ने थाम ली।

'छम छम' की आवाज के साथ धीमे धीमे कदमो से रसकपूर झालर सरकाकर हाल म दाखिल हुई।

हाल के बीचो-बीच आकर रसकपूर सिर झुकाये हाथ जोडकर खडी हो गयी।

ऐसा लग रहा था, मानो सगमरमर की कोई प्रतिमा हाल के मध्य आकर खडी हो गयी हो!

सरदारो के प्याले होठो से सटे-के सटे रह गये। नेत्र विस्फारित हो गये। क्या जवान, क्या वृद्ध—सभी सरदारो के हाथ अपने-आप सीने के बायी ओर चले गये।

नीले कालीन पर हल्के हरे परिधानो मे झुकी खडी रसकपूर महाराजा के आदेश का इतजार कर रही थी।

महाराजा स्वय रसकपूर के सौन्दय मे अपना होशोहवास खो बैठे थे। वे सुध बुध खोये लगातार रसकपूर को देखे जा रहे थे।

खडे-खडे जब रसकपूर थक गयी तो उसने पलकें उठाकर महाराजा की ओर देखा।

पलको का उठना था कि दो सीप सरीखी आखें चमक उठी। महाराजा उन आखो म डूबते चले गये। उनका हाथ अभी तक आदेश देने हेतु ऊपर नही उठा था।

रसकपूर कब तक इस प्रकार झुकी खड़ी रहती ! उसने थोड़ा-सा पैर हिलाकर घुंघरू बजा दिए। महाराजा सहित सभी सरदारों की चेतना वापस लौट आयी। महाराजा ने दायां हाथ कुछ ऊपर उठाकर गिरा दिया। आदेश पाकर रसकपूर तबले की ताल पर थिरकने लगी।

ऐसा लुभावना नृत्य महाराजा ने पहले कभी नहीं देखा था। रसकपूर के अंग अंग को थिरकते देखकर उनकी आखें फटी की फटी रह गयी थी। रसकपूर बिजली की तरह नाच रही थी। सितार बजाता हुआ जयराज आज एक विशेष प्रकार का आनन्द अनुभव कर रहा था।

सरदार नृत्य देखकर झूम उठे। फिर क्या था, गले में से मोतियों की मालाएँ निकलने लगी, उंगलियों में से अंगूठियां बाहर आ गयीं, सब कुछ रसकपूर पर न्यौछावर होने लगा।

अचानक महाराजा सिंहासन से उठकर खड़े हो गए।

'बस करो सुंदरी ! तुम्हारे नाजुक पांव अब थक गए होंगे।"

महाराजा की कद्रदानी पर दिलोजान से न्यौछावर होते हुए रसकपूर ने नृत्य बंद कर दिया।

लड़खड़ाते कदमों से चलकर महाराजा स्वयं रसकपूर के पास पहुंचे।

'सच ! जैसा सुना था वैसा ही है ! ऐसा सौंदर्य अन्यत्र नहीं हो सकता !" महाराजा ने रसकपूर का हाथ अपने हाथ में लेकर चूम लिया, 'ये अंगूरी आखें, ऐसा संगमरमरी बदन, गुलाब की पखुड़ियों-सरीखे होंठ अन्य किसी के नहीं हो सकते ! रूपसुंदरी ! क्या नाम है तुम्हारा ?"

'रसकपूर !" कहकर रसकपूर सिर झुकाए खड़ी रही।

महाराजा ने प्याला एक ओर फेंक दिया। अपनी दोनों हथेलियों में रसकपूर का मुंह भरकर ऊपर उठाया और कहा रूपसुंदरी, मेरी आंखों में देखो।

महाराजा का स्पर्श पाकर रसकपूर का चेहरा रक्त वर्ण हो गया। लज्जा के भाव चेहरे पर उभर आए। उसने धीरे धीरे अपनी पलकें ऊपर

उठायी। महाराजा की आंखों से टकराकर उसकी नजरें वापस नीचे गिर गयीं।

सुध-बुध खोये महाराजा ने भरी सभा में समस्त अदबों को ताक पर रखते हुए रसकपूर की ठोडी पकडकर चेहरा ऊपर उठाया और उसके होठों पर झुक गये।

महाराजा का यह आचरण अप्रत्याशित था। सब सरदार यह दृश्य देखकर हक्के-बक्के रह गये।

ऊपर झरोखों से महफिल का आनन्द ले रही रानियां महाराजा के भरी सभा में एक वेश्या पर आसक्त होकर झुक जाने को अपनी आंखों से देख नहीं सकीं और गश खाकर गिर पडीं। पारदायता और पासवानों ने अपनी आंखें मूंद लीं।

"अदभुत सुन्दरी! मांगो, जो तुम्हें मांगना है। आज तुम्हारी हर मुराद पूरी होगी।"

रसकपूर ने अदब जताते हुए कहा, "अन्नदाता! मैं नाचीज इस कृपा के योग्य नहीं हूं। आपके दर्शन सुलभ रहें, यही मेरी अभिलाषा है!"

"है जो तुम्हारी अभिलाषा, वही है अब मेरी भी अभिलाषा! तुम्हारी मुराद पूरी होगी।" प्रसन्नचित्त महाराजा ने एक बार फिर रसकपूर को चूम लिया।

"अन्नदाता! मैं नाचूं?" रसकपूर ने पूछा।

"नहीं! अब यह कोमल शरीर काफी थक चुका होगा। इसे अब आराम चाहिए।" फिर वे सरदारों की ओर उन्मुख हुए, "महफिल समाप्त हुई!"

सभी सरदार महाराजा को कोर्निश करते हुए मुकुटमहल से बाहर चले गये। साजिंदे भी अपने-अपने साज उठाकर चल पडे। अब वहां सिर्फ गुणीजनखाना का मुखिया जयराज अकेला किंकर्त्तव्यविमूढ खडा था।

"जयराज! आज तुमने मुझे वह हसीन तोफा दिया है, जिसके लिए मैं तुम्हें जो भी इनाम दूं, वह थोडा है। तुम्हें सांगानेर की जागीर बख्शी

प्रधानमत्री दोपहर तक महाराजा के छवि निवास से बाहर निकलने का इतजार करते रहे । अत मे निराश होकर वह अपने निवास को लौट आये ।

महाराजा शाम तक छवि निवास से बाहर नही निकले । सध्या मे गोविंददेवजी के मदिर मे शख, नगाडा और घटियो की जब आवाज हुई तब कही उनकी तन्द्रा टूटी । छवि निवास के पट खुले और महाराजा रसकपूर के साथ आरती म शामिल हुए ।

आरती के बाद अप्रत्याशित रूप से रसकपूर ने भजन गाना शुरु कर दिया । सारा चन्द्रमहल मधुर कण्ठ के आलाप से गूज उठा । किसी ने भी इसके पूव इतना सुरीला गायन नही सुना था । रानिया यह स्वर सुन कर चौंक पडी तथा भक्तजन अह्लादित हो उठे । पुजारी ने रसकपूर को आशीर्वाद दिया ।

आरती के बाद महाराजा रसकपूर का पुन छवि निवास मे ले गये ।

पूरे एक सप्ताह बाद महाराजा का खुमार उतरा और व राजकाज का निपटाने हेतु दरबार म आय । विभिन्न विभागा के मत्रिया ने राज काज से सम्बधित कारवाई शुरु की, परन्तु कुछ ही देर म महाराजा उकता गए । और 'प्रधानमत्री से ही पूछ लें । मै उन्हे अधिकृत करता हू ।" कहते हुए वापस छवि निवास मे चले गय ।

प्रधानमत्री को, शहर म हो रही चचा और रसकपूर को राजमहल म पनाह दने पर सरदारो म हुई प्रतिक्रिया के बारे म महाराजा को अवगत कराने का समय ही नही मिला ।

प्रधानमत्री ने शीघ्रता स सारा राजकाज निपटाया और समस्या का समाधान ढूढने के प्रयोजन से एकान्त चितन हेतु गोविंददेवजी के मदिर के पिछवाडे चले गय ।

दो घटा के गहन चितन के बाद प्रधानमत्री इस नतीजे पर पहुचे कि चूकि रसकपूर को राजमहल म प्रवेश दिलाने वाला गुणीजनखाना का मुखिया ही है इसलिए उसका सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिये ।

जाती है। अब तुम जाओ, कल हाजिर होना। रसकपूर अब यही रहेगी, हमारे पास।"

जयराज ने महाराजा को कोर्निश की और कालीन पर पडे एकमात्र साज सितार को उठाकर चल पडा।

महाराजा ने रसकपूर से पूछा, 'सुदरी! क्या तुम इस महल म रहना पसद करोगी?"

रसकपूर ने महाराजा के सीने पर अपना सिर टिकाते हुए कहा 'जैसी अनदाता की इच्छा!'

महाराजा बहुत खुश हुए। उन्होने ताली बजाकर सेवको को बुलाया और प्रकाश समाप्त कर देने का आदेश दिया।

शहर मे सवत्र चर्चा फल गयी कि महाराजा ने एक 'भक्तन (ऐसी वश्या जिसे किराये पर मदिरो म भजन गाने के लिए बुलाया जाता था, तथा जिसे शारीरिक पवित्रता बनाय रखना जरूरी होता था, यह सिफ मुजरा कर सकती थी, इसके लिए यान यापार प्रतिबधित था) को महल म रख लिया है। रसकपूर के सौन्य नत्यकला और सुरीले स्वर की चचा के साथ लोग महाराजा के व्यवहार की कडी आलोचना कर रह थे।

गुप्तचरो ने नगर कोतवाल को सूचना दी कि जयपुर की रिआया न रसकपूर का महल म रखे जान को पसद नही किया है।

नगर कोतवाल न शहर और सामन्तवग म रसकपूर को लेकर हो रही चर्चा से प्रधानमत्री को अवगत कराया।

यह सुनकर प्रधानमत्री चितित हो उठे। महाराजा का लोगो की प्रतिक्रिया बताने के लिए व राजमहल म पहुचे।

प्रधानमत्री को मुख्य अगरक्षक न बताया कि महाराजा अभी तक छवि निवास से बाहर नही निकले ह और छवि निवास मे रसकपूर भी उनके साथ है।

प्रधानमंत्री दोपहर तक महाराजा के छवि निवास से बाहर निकलने का इंतजार करते रहे। अंत में निराश होकर वह अपने निवास को लौट आये।

महाराजा शाम तक छवि निवास से बाहर नहीं निकले। संध्या में गोविंददेवजी के मन्दिर में नाद, नगाड़ा और घंटियां की जब आवाज हुई तब कहीं उनकी तंद्रा टूटी। छवि निवास के पट खुले और महाराजा रसकपूर के साथ आरती में शामिल हुए।

आरती के बाद अप्रत्याशित रूप से रसकपूर ने भजन गाना शुरू कर दिया। सारा चन्द्रमहल मधुर कण्ठ के आलाप से गूंज उठा। किसी ने भी इससे पूर्व इतना सुरीला गायन नहीं सुना था। रानियां यह स्वर सुन कर चौंक पड़ीं तथा भक्तजन आह्लादित हो उठे। पुजारी ने रसकपूर को आशीर्वाद दिया।

आरती के बाद महाराजा रसकपूर को पुनः छवि निवास में ले गये।

पूरे एक सप्ताह बाद महाराजा का खुमार उतरा और वे राजकाज को निपटाने हेतु दरबार में आये। विभिन्न विभागों के मंत्रियों ने राज काज से सम्बंधित कार्यवाई शुरू की परन्तु कुछ ही देर में महाराजा उकता गए। और "प्रधानमंत्री से ही पूछ लें। मैं उन्हें अधिकृत करता हूं।" कहते हुए वापस छवि निवास में चले गये।

प्रधानमंत्री को, शहर में हो रही चर्चा और रसकपूर को राजमहल में पनाह देने पर सरदारों में हुई प्रतिक्रिया के बारे में महाराजा को अवगत कराने का समय ही नहीं मिला।

प्रधानमंत्री ने शीघ्रता से सारा राजकाज निपटाया और समस्या का समाधान ढूंढने के प्रयोजन से एकान्त चिंतन हेतु गोविंददेवजी के मंदिर के पिछवाड़े चले गये।

दो घंटे के गहन चिंतन के बाद प्रधानमंत्री इस नतीजे पर पहुंचे कि चूंकि रसकपूर को राजमहल में प्रवेश दिलाने वाला गुणीजनखाना का मुखिया ही है, इसलिए उसका सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिये।

परन्तु जिस समय प्रधानमत्री गोविंददवजी के मदिर से नरवन म लौट, गुणीजनखाना का मुखिया जयराज अपन घर के लिए प्रस्थान कर चुका था।

प्रधानमत्री ने मुख्य अगरक्षक से महाराजा के सम्बन्ध म ताजा स्थिति की जानकारी प्राप्त की। अगरक्षक ने उन्ह बताया कि महाराजा का अब भी वही आलम है जो एक हफ्ते पहले था। प्रधानमत्री राजमहल स सीधे जौहरी बाजार सब्जीमण्डी म स्थित जयराज क आवास पर पहुच।

दिन भर के रियाज से थककर जयराज अभी थोडी दर पहले ही घर लौटा था और जिस समय प्रधानमत्री की बग्घी आकर उसके द्वार पर रुकी, वह शयन को जा चुका था।

कामदार ने प्रधानमत्री का अभिवादन किया और अदब के साथ पूछा 'क्या मुखिया जयराज को जगा दिया जाए ?'

किंचित सोचकर प्रधानमत्री न कहा "नही ! उसस कह दना कल राजमहल म आत ही मुझस मिल ले !"

'जो हुक्म !' 'कहकर कामदार न प्रधानमत्री को कोर्निश की।

प्रधानमत्री को रात भर नीद नही आयी। सारी रात वह समस्या के विभिन्न पहलुओ पर विचार करते रहे। रसकपूर का भूत जिस हद तक राजा पर चढ चुका था उसे अब शीघ्र ही उतारना आवश्यक था। अन्यथा रसकपूर यदि महाराजा के पास और अधिक दिनो तक रही तो राजकाज के चौपट हो जान और अनक समस्याओ के खडा हो जान का खतरा था। राज्य की आर्थिक और राजनीतिक स्थिति ठीक न रहने स, जहा राज्य के लिए बाह्य आक्रमण का खतरा बना हुआ था वहा आतरिक हालात भी अच्छे न थ। कुछ सरदार सिर उठान लगे थे।

रात भर चिंतन के बाद प्रधानमत्री इस नतीजे पर पहुच कि किसी प्रकार महाराजा के मन म रसकपूर के प्रति घृणा पैदा की जाये।

रसकपूर कौन है ? कहा से आयी है ? वह कौन-सी महत्त्वाकाक्षा

रखती है ? और यदि उसे धन का ही लोभ है तो समस्या का शीघ्र समाधान मिल जाने की आशा हो सकती है। उसे पर्याप्त धन देकर वश में किया जाय और महाराजा के प्रति उसके व्यवहार में ऐसा परिवर्तन लाया जाय कि महाराजा स्वयं ही रसकपूर से घृणा करने लगें। रसकपूर के बारे में विस्तार से जयराज से जाना जा सकता है। प्रात उससे मिलकर ही समस्या का हल ढूंढ़ने का निश्चय करके प्रधानमंत्री ने अपनी आंखें बंद कर लीं।

सवेरे समस्या सुलझने के बजाय और अधिक उलझ गई। प्रधानमंत्री जब राजमहल में पहुंचे, उन्हें बताया गया, महाराजा एक पखवाड़े के लिए रसकपूर को लेकर चंद्रमहल से जयगढ़ को चले गये हैं। महाराजा ने किसी को भी जयगढ़ आने के लिए प्रतिबंधित कर दिया है। प्रधानमंत्री के लिए हिदायत छोड़ गये हैं कि वे उनकी अनुपस्थिति में आवश्यक राज-काज निपटाते रहें।

प्रधानमंत्री जलेब चौक स्थित अपने कार्यालय में आ गये और जय-राज की प्रतीक्षा करने लगे।

उन्होंने अभी आवश्यक कागजात देखने शुरू किये ही थे कि चोबदार ने आकर सूचना दी—चांदसिंह मिलने आये हैं।

चांदसिंह जयपुर रियासत का प्रभावशाली सामन्त था। राजमहल के अंदर और बाहर उसकी काफी प्रतिष्ठा थी। वह प्रखर राजनीतिज्ञ और कुशल सेनापति था। जयपुर दरबार में तो वह एक प्रमुख सलाह-कार माना जाता था।

प्रधानमंत्री ने तुरंत चांदसिंह को अंदर भेजने के लिए कहा।

प्रधानमंत्री ने समझा दूनी का सामन्त चांदसिंह किसी राज-काज से आया होगा, परंतु वार्ता से पता चला कि वह भी रसकपूर की समस्या से चिंतित होकर आया है। चांदसिंह ने, महफिल में महाराजा द्वारा किये गये आचरण और रसकपूर को लेकर महल में बैठे रहने पर, प्रधान-मंत्री के सामने गहरी चिंता व्यक्त की। प्रधानमंत्री ने भी अपनी चिंता

चादसिंह की चिंता के साथ जोड दी और दोनो एक साथ समस्या का समाधान ढूंढन लग । काफी सोच विचारकर चादसिंह न सुझाया कि रसकपूर का त्याग दन के लिये राजमाता द्वारा महाराजा पर दबाव डलवाया जाय। प्रधानमत्री का यह सुझाव किसी हद तक उपयोगी लगा।

दूनी के साम त चादसिंह और प्रधानमत्री के बीच विचार विमश अभी चल ही रहा था कि चोबदार ने जयराज के आने की सूचना दी।

'हाजिर किया जाय !" जवाब दूनी के साम त न दिया।

जयराज के लिए प्रधानमत्री द्वारा इस प्रकार बुलाया जाना अप्रत्याशित था। विशेष परिस्थितिया मे ही प्रधानमत्री मुखियाओ को अपन कार्यालय म बुलाया करते थे, अयथा सारी बातचीत राज काज निपटाये जान के दौरान शरबते म ही हो जाती थी। जयराज किसी भावी शका स ग्रस्त अदर दाखिल हुआ।

प्रधानमत्री ने बिना वक्त जाया किये जयराज से पूछा "रसकपूर कौन ह ? तुम इसे कहा से लाये हो ? वह क्या चाहती है ? क्या वह धन की लोभी है ?"

एकाएक इतन सारे प्रश्न पूछे जान से जयराज हतप्रभ रह गया। वह हाथ जोडे खडा रहा।

दूनी के साम त चादसिंह ने अपनी मूछो पर ताव दत हुए और ताद पर बधे रेशमी कमरब द की गाठ को मजबूत करते हुए जोर से कहा "सब सच सच बताओ !"

रसकपूर के बार म जयराज जितना जानता था वह उसन बिना हर फेर के बता दिया। जयराज ने उ ह बताया कि रसकपूर एक 'भक्तन थी। जयपुर म कहीं वह बाहर से आयी थी। हालाकि वह बनिया परिवार की है पर लाचारी म उसे जयपुर आकर यह पेशा अख्तियार करना पडा था। अ य भक्तनो के साथ उसे भी मदिरा म कि[illegible]
गाने के लिए बुलाया जाता था। इधर वह अपन मधुर
[illegible] ही मदिरा म लोकप्रिय हो गयी थी। उस भा वह

मिली थी। उसकी आवाज से प्रभावित होकर ही जयराज ने उसे गुणीजन खाना मे बुलवाया था और शरद उत्सव के लिये तैयार किया था।

अपनी मूछो पर हाथ फेरता हुआ चादसिंह कुछ देर तक सोचता रहा, फिर उसने जयराज को इशारा कर चल जाने को कहा।

जयराज चला गया।

दूनी के सामन्त न प्रधानमत्री को एक और सुझाव दिया, "मेरा विचार है कि एक और महफिल का आयाजन किया जाय।"

चादसिंह के इस सुभाव से प्रधानमत्री चौंक पडे, "ऐसा किस लिए?"

चादसिंह ने महफिल का उद्देश्य प्रधानमत्री को बताया। प्रधानमत्री न सिर हिलाकर सहमति व्यक्त की।

एक पखवाडे के बाद महाराजा जगतसिंह जयगढसे नीचे उतर आए, चद्रमहल म पहुचत ही उहाने मिस्त्रीखाना के मुखिया को बुलवाया और जयगढ म कुछ नय निर्माण किये जान का आदेश दिया। रसकपूर को जयगढ उतना आरामदायक नही लगा था।

आदशानुसार मिस्त्रीखाना का मुखिया एक सौ मजदूरो और कारीगरो के साथ जयगढ के नवीनीकरण और सौदय अभिवद्ध न म जुट गया।

चद्रमहल के भी एक खण्ड को नये सिर से सजाया गया और उसम रसकपूर का आवास बनाया गया। महाराजा जगतसिंह ने रसकपूर के आवास का नाम 'प्रियतम निवास' रखा। रसकपूर की सेवाथ दो दजन नयी परिचारिकाओ की नियुक्ति की गयी।

जयगढ से लौट आन के बाद महाराजा राज काज म आशिक रुचि लने लग गये थ। प्रधानमत्री और दूनी का सामन्त चादसिंह कोई-न-कोई काम निकालकर महाराजा को अधिक से अधिक व्यस्त रखने का प्रयास करते रहत थे।

शहर मे रसकपूर को लेकर उठी चचा खत्म ता नही हुई थी पर

चादसिंह की चिंता के साथ जोड़ दी और दोनों एक साथ समस्या का समाधान ढूंढने लगे। काफी सोच विचार कर चादसिंह ने सुझाया कि रसकपूर का त्याग करने के लिए राजमाता द्वारा महाराजा पर दबाव डलवाया जाय। प्रधानमंत्री को यह सुझाव किसी हद तक उपयोगी लगा।

दूनी के सामन्त चादसिंह और प्रधानमंत्री के बीच विचार विमर्श अभी चल ही रहा था कि चोबदार ने जयराज के आने की सूचना दी।

'हाजिर किया जाय।'' जवाब दूनी के सामन्त ने दिया।

जयराज के लिए प्रधानमंत्री द्वारा इस प्रकार बुलाया जाना अप्रत्याशित था। विशेष परिस्थितियों में ही प्रधानमंत्री मुखियाओं को अपने कार्यालय में बुलाया करते थे, अन्यथा सारी बातचीत राज-काज निपटाये जाने के दौरान दरबार में ही हो जाती थी। जयराज किसी भावी शंका से ग्रस्त अंदर दाखिल हुआ।

प्रधानमंत्री ने बिना वक्त जाया किये जयराज से पूछा "रसकपूर कौन है ? तुम इसे कहां से लाये हो ? वह क्या चाहती है ? क्या वह धन की लोभी है ?"

एकाएक इतने सारे प्रश्न पूछे जाने से जयराज हतप्रभ रह गया। वह हाथ जोड़े खड़ा रहा।

दूनी के सामन्त चादसिंह ने अपनी मूंछों पर ताव देते हुए और तोंद पर बंधे रेशमी कमरबंद की गांठ को मजबूत करते हुए जोर से कहा "सब सच-सच बताओ।"

रसकपूर के बारे में जयराज जितना जानता था, वह उसने बिना हेर-फेर के बता दिया। जयराज ने उन्हें बताया कि रसकपूर एक 'भक्तन' थी। जयपुर में कहीं वह बाहर से आयी थी। हालांकि वह बनिया परिवार की है पर लाचारी में उसे जयपुर आकर यह पेशा अख्तियार करना पड़ा था। अन्य भक्तनों के साथ उसे भी मंदिरों में किराये पर भजन गाने के लिए बुलाया जाता था। इधर वह अपने मधुर कण्ठ की वजह से शीघ्र ही मंदिरों में लोकप्रिय हो गयी थी। उसे भी वह एक मंदिर में ह

मिली थी। उसकी आवाज से प्रभावित होकर ही जयराज ने उसे गुणीजन खाना मे बुलवाया था और शरद उत्सव के लिय तयार किया था।

अपनी मूछो पर हाथ फेरता हुआ चादसिह कुछ देर तक सोचता रहा, फिर उसन जयराज को इशारा कर चल जान को कहा।

जयराज चला गया।

दूनी के सामन्त न प्रधानमत्री का एक और सुझाव दिया, "मेरा विचार ह कि एक और महफिल का आयाजन किया जाय।"

चादसिह के इस सुभाव स प्रधानमत्री चौक पडे, "ऐसा किस लिए?"

चादसिह न महफिल का उद्देश्य प्रधानमत्री को बताया। प्रधानमत्रा ने सिर हिलाकर सहमति व्यक्त की।

,

एक पखवाडे के बाद महाराजा जगतसिह जयगढसे नीचे उतर आए, चद्रमहल म पहुचत ही उन्हान मिस्त्रीखाना के मुखिया को बुलवाया और जयगढ मे कुछ नय निर्माण किय जान का आदश दिया। रसकपूर को जयगढ उतना आरामदायक नही लगा था।

आज्ञानुसार मिस्त्रीखाना का मुखिया एक सौ मजदूरो और कारीगरा के साथ जयगढ के नवीनीकरण और सौदय-अभिवद्ध न मे जुट गया।

चद्रमहल के भी एक खण्ड का नय सिरे से सजाया गया और उसम रसकपूर का आवास बनाया गया। महाराजा जगतसिह ने रसकपूर के आवास का नाम 'प्रियतम निवास' रखा। रसकपूर की सेवाथ दो दजन नयी परिचारिकाओ की नियुक्ति की गयी।

जयगढ से लौट आने के बाद महाराजा राज काज म आशिक रुचि लेने लग गये थे। प्रधानमत्री और दूनी का सामन्त चादसिह कोई न-कोई काम निकालकर महाराजा को अधिक से अधिक व्यस्त रखन का प्रयास करत रहते थे।

शहर म रसकपूर को लकर उठी चचा खत्म ता नही हुई थी पर

हा, ठडी जरूर पड गयी थी। चन्द्रमहल म भी प्रात काल और सध्या की आरती के समय रसकपूर के भजनो के आलाप की सुरीली आवाज ने रानियो, परदायतो और पासवाना के क्षोभ का भी काफी हद तक कम कर दिया था।

महल मे प्रतिष्ठित होने के बाद रसकपूर न विवेक से काम लेना शुरू किया। शहर मे उसको लेकर हुई चचा और जनानी डयौढी मे हो रही फुसफुसाहट से वह परिचित थी। हर वक्त महाराजा के उसकी खुमारी मे पडे रहने से विद्राह हो सकता था। इस तथ्य को मद्दे-नजर रखते हुए रसकपूर कभी कभार बीमारी का बहाना कर महाराजा को अन्य रानियो के पास भेज दिया करती थी।

उधर अपनी योजनानुसार प्रधानमत्री के साथ मिलकर टूनी के सामन्त ने आमेर के महल मे एक विराट जलसे का आयाजन किया। सामन्त चादसिंह इस जलसे म भारी भीड एकत्रित करना चाहता था। अत जलसे का भारी प्रचार किया गया तथा हर खास नागरिक को इस म सम्मिलित होने के लिये आमन्त्रित किया गया।

दक्षिण स एक सुप्रसिद्ध नृत्यागना को इस जलसे म नृत्य प्रस्तुत करने के लिये अपार धन व्यय करके बुलाया गया था। विजयलक्ष्मी नामक यह नृत्यबाला काफी सुदर थी। उसके लम्ब बालो और बडी बडी शखाकार आखो की कोई तुलना नही थी। दुबली पतली रसकपूर की अपक्षा भरे हुए बदन की विजयलक्ष्मी की मासलता विशेष मादकता उत्पन्न करती थी। चादसिंह और प्रधानमत्री का दक्षिण की इस सुदरी को जयपुर बुलान का मतव्य महाराजा को विजयलक्ष्मी के प्रति आकर्षित कर उनको रसकपूर से विलग करना था। अपन उद्देश्य मे सफल होने के लिए दोनो ने गुणीजनखाना के मुखिया जयराज पर भी काफी दबाव डाला था। नृत्य के दौरान सितार-वादन की प्रमुखता को अनुभव करते हुए जयराज स कहा गया था कि वह दक्षिण से बुलायी गयी नत्यागना विजयलक्ष्मी का नृत्य सफल करे और यदि प्रतियोगिता म रसकपूर उतर

आय तो उसका नृत्य असफल करा द ।

दाना न अपने विश्वसनीय अनुचरा द्वारा जलसे और विजयलक्ष्मी की सुदरता की खूब चर्चा फैलायी । विजयलक्ष्मी के बारे म अनेक बातें कही गयीं । वह अद्वितीय सुदरी है । उस जैसी बडी आखें विश्व की किसी अय स्त्री की हो ही नही सकती । नाचने म तो वह साक्षात नट-राज ह । चौबीस घटा तक लगातार नाचकर भी वह नही थकती । उसका ता हर अग नृत्य करता है । आदि-आदि ।

एमी प्रसशा सुनकर लगा जैसे पूरा शहर ही विजयलक्ष्मी को देखने के लिये उमड पडेगा ।

जनानी डयौडी मे अवश्य इस प्रचार की विपरीत प्रतिक्रिया हुई । रानिया, परदायतें और पासवानें आग ही रसकपूर से परेशान थी, अब महाराजा के सामने एक और सुदर नृत्यवाला के पेश होने की खबर सुनकर उनके चेहरे उतर गये ।

आमेर महल के विशाल जलेब चौक को विशेष रूप से सजाया गया था । चौक के बीचो-बीच एक ऊचा मच बना दिया गया था ।

देखत दखते जनब चौक भर गया । तिल रखने की जगह भी शेष नही बची । सरदारगण आकर अपने-अपने नियत स्थानो पर बठ चुके थे । परिचारिकाआ न मदिरा के प्याले भरना शुरू कर दिये थे ।

झिलाय के ठाकुर ने इसरदा के रावराजा से पूछा, "यह आयोजन किस उपलक्ष्य म हा रहा है ?"

जवाब डिग्गी के ठाकुर मेघसिंह ने, मदिरा का प्याला होठा से सटाते हुए दिया, "दक्षिण से एक परी आयी है । उसे महाराजा के सामने पेश किया जा रहा है !"

'हू !' कहते हुए झिलाय के ठाकुर ने भी अपना चादी का गिलास अधरा पर टिका लिया ।

नगाडा बजा । चोवदार की आवाज गूजी—

"बाअदब, बामोलाहिजा होशियार ! आम रियाय। होशियार !

सरदारगण होशियार ! राज राजेन्द्र महाराजाधिराज सवाई जगतसिंहजी बहादुर पधार रहे हैं ।"

सरदारों ने अधरों से प्याले हटाकर नीचे रख दिये और महराजा के सम्मान में खडे हो गये ।

उपस्थित जनसमूह ने जय-जयकार कर महाराजा का अभिवादन किया।

सब लोग तब तक सिर झुकाये खडे रहे जब तक महाराजा सिंहासन पर बैठ न गये। उनके विराजते ही पुनः एक बार जयघोष हुआ और सभी कोर्निश करते हुए बैठ गये ।

महाराजा रसकपूर को भी साथ लाये थे। उसके साथ आने की पहले से ही सम्भावना थी अत महाराजा के बगल में बायीं ओर उसके बैठने की व्यवस्था कर दी गई थी।

रसकपूर शाही पोशाक में आयी थी। हरे रेशमी लहंगे के ऊपर काली चोली और उस पर हरी चुनरी लहरा रही थी। नये आभूषणों ने उसका आकर्षण और अधिक बढा दिया था।

एक तीखी नजर रसकपूर पर फेंकते हुए चांदसिंह ने प्रधानमंत्री के कान में कहा, 'जाने कैसा जादू कर डाला है इस नागिन ने महाराजा पर !"

प्रधानमंत्री, जो मंच की ओर देख रहे थे, सिर्फ 'हां' कहकर चुप हो गये।

जयराज मंच पर खड़ा हो गया। उसने महाराजा को कोर्निश की और जलसा शुरू किये जाने की आज्ञा मांगी।

आजकल महाराजा हर काम रसकपूर से पूछकर ही शुरू करते थे। उन्होंने रसकपूर की ओर देखकर पूछा, "क्या कार्यक्रम शुरू कराया जाय?"

अधरों पर एक हल्की-सी मुस्कान बिखेरते हुए रसकपूर ने अपनी महीन पतली आवाज में कहा, "हां !"

महाराजा ने अपना दायां हाथ कुछ ऊपर उठा कर गिरा दिया।

महाराजा से अनुमति पाकर जयराज मच पर बैठे हुए साजिदो की ओर मुडा और दोना हाथ फैलाकर उन्ह सगीत शुरू करने का आदेश दिया।

तमाम महल सगीत से गूज उठा।

दस मिनट तक सगीत की स्वर-लहरी से पहले माहौल बनाया गया और फिर सगीत रुकवाकर जयराज मच पर खडा हो गया। उसने पुन महाराजा का अभिवादन किया और नृत्यसुदरी विजयलक्ष्मी के मच पर आने की घोषणा की।

लोगो की सासें रुक गयी। हुस्न की परी को देखने के लिए सब बेताब हो उठे। स्वयं रसकपूर, जिसने विजयलक्ष्मी के बारे मे किया गया प्रचार सुन रखा था, विस्मयपूण मुद्रा लिय मच की ओर देख रही थी।

निस्तब्ध वातावरण 'छम छम' की आवाज से टूटा और बिजली की फुर्ती से विजयलक्ष्मी मच पर आ गयी। विजयलक्ष्मी ने घुघरुओ की एक थाप दी और फिर सिर झुकाकर महाराजा का अभिवादन किया।

जैसा प्रचार किया गया था, विजयलक्ष्मी लगभग वैसी ही थी। दक्षिण की यह सुदरी ऊपर से नीचे तक एक ही साचे मे ढली हुई थी। पीठ पर झूल रही केशवर्तिका उसके नितम्बो से भी एक बित्ता नीचे तक चली गयी थी। आखें सचमुच बडी बडी थी। पलको पर विशेष ढग से लगाया गया काजल उसकी सुदरता म अभिवृद्धि कर रहा था। कसे हुए वस्त्रो मे सुदरी के वक्षा एव नितम्बा के उभार लोगा के मस्तिष्का म बिजली कौंधा रहे थे। नीली कचुकी गौराग उनत मासल उरोजा को सभाल पाने म असमर्थ सिद्ध हो रही थी। (सभवत महाराजा को आकर्षित करने के उद्देश्य से विजयलक्ष्मी का जानबूझ कर छोटी कचुकी पहनायी गयी थी।) नाभि के नीचे दक्षिण भारतीय ढग से बाधी हुई साडी, जघाओ से चिपकी हुई उसकी पिडलिया की सुडौलता को दर्शा रही थी। गौर धवल पीठ पर कचुकी का बधी हुई गहरी नीली डोर के अलावा कुछ न था।

" सुदर ! अति सुदर !! " सब लाग एक साथ 'वाह वाह' कह उठे ।

महाराजा भी विस्मय मुग्ध नजरा से विजयलक्ष्मी का दख रह थे ।

महाराजा के चेहरे पर सौदय के पडे प्रभाव को देखकर चार्सिह और प्रधानमत्री बहुत खुश हुए और एक-दूसरे की ओर देखकर अपनी सफलता पर मद मद मुस्कराने लगे ।

विजयलक्ष्मी ने नटराज की मुद्रा म एक बार मच पर चारो तरफ घूम कर समस्त उपस्थित दशको का अभिवादन किया और फिर तबले की थाप पर उसने नृत्य शुरू कर किया ।

साज जोरो मे बज उठे और लय पर विजयलक्ष्मी थिरकने लगी ।

विजयलक्ष्मी ने भारत नाटयम प्रस्तुत किया । जयपुर की जनता ने कत्थक नत्य का तो कई बार आनद लिया था परतु भारत नाटयम का भव्य प्रदशन आज ही वह देख रही थी ।

विजयलक्ष्मी न भी कोई कमर नही उठा रखी । उसने उच्च कोटी का नत्य प्रस्तुत किया ।

सामत और दशक भूम उठे । महाराजा भी बहुत प्रभावित हुए । वे विस्फारित नेत्रो मे थिरक रही विजयलक्ष्मी को देख रहे थे ।

सामन्त चार्सिह और प्रधानमत्री की नजरें रसकपूर की प्रतिक्रिया जानने के लिए उसके चहरे पर गयी । रसकपूर निर्लिप्त भाव से नृत्य देख रही थी । उसके चहरे पर इर्ष्या, द्वेष, घृणा विषाद, क्षोभ अथवा हीनता का कोई भाव न पाकर दोनो निराश हा गये ।

नत्य पराकाष्ठा पर था । दक्षिण की नृत्यागना का अग अग नाच रहा था । मासल शरीर म उठ गिर रही लहरें दशको को तरगित कर रही थी । आखा की पुतलिया बिजली की तरह चमक रही थी । नितम्बा से टकरा कर कर्णावर्तिका बार बार उपर उछल जाती थी ।

दो घटा तक लगातार नाचन के बाद विजयलक्ष्मी ने नत्य समाप्त किया । भारी करतल ध्वनि हुई ।

रसकपूर ने देखा महाराजा ने भी करतल ध्वनि की है।

"वाह-वाह!" "खूब नाची!" के शोर से सारा वातावरण गूज उठा।

सामन्त चादसिंह 'वाह-वाह' करता हुआ दोनो हाथ फैलाय मच की ओर दौड पडा। वह मच पर पहुच गया। उसने विजयलक्ष्मी का हाथ चूमकर कहा, 'तुम न सिर्फ अनुपम सुदरी हो, एक कुशल नत्यागना भी हो। मैं दावे के साथ कह सकता हू, तुम्हारे रूप और नृत्य के सामने विश्व की कोई कलाकार नही ठहर सकती। हम तुम पर बहुत प्रसन्न है। तुम्हे दूनी जागीर की तरफ से एक सहस्र स्वर्ण मुद्राए उपहार स्वरूप दी जाती है।'

जन-समूह ने पुन करतल ध्वनि की।

चादसिंह न कहना जारी रखा, "और तुम्हे दूनी मे आकर रहने का आमत्रण भी दिया जाता है। वहा तुम्हे वैभवपूर्वक बसाया जायगा।"

सामन्त चादसिंह और प्रधानमत्री को आशा थी, अठ्ठारह वर्षीय अल्प वयस्क महाराजा विजयलक्ष्मी के रूप और कला पर फिसल चुके होंगे और रसकपूर की उपेक्षा करके विजयलक्ष्मी को अपने नजदीक बुला लेंगे। परन्तु उन दोनो ने देखा महाराजा ने ऐसा कुछ नही किया। वे सिर्फ विस्फारित नेत्रो से मच की ओर निहार रहे थे।

विजयलक्ष्मी मन ही मन मे खुश होती हुई दूनी के सामन्त के सामने झुककर अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करने लगी।

चादसिंह ने एक बार फिर जोर जोर से कहना शुरू किया, "मै फिर कहता हू, विजयलक्ष्मी के टक्कर की कोई अन्य रूपसी और कलाकार इस धरती पर हो ही नही सकती।"

रसकपूर से अब रहा नही गया। उसने सामन्त चादसिंह की चुनौती स्वीकार की और अपनी जगह से उठकर खडी हो गयी। रसकपूर ने महाराजा से अपनी कला प्रदर्शित करने के लिए आज्ञा मागी। रसकपूर की आखो मे नृत्य करने की प्रबल और स्पष्ट इच्छा को देखकर महाराजा

ने उसे नृत्य करने की इजाजत दे दी।

रसकपूर सीधी मच पर पहुची । उसने विजयलक्ष्मी द्वारा उतार गये घुघरू अपने परो मे बाधे और जयराज की ओर मुडी । जयराज चुपचाप मुह झुकाये बैठा था। प्रधानमत्री और सामन्त चादसिह ने उस पर रसकपूर का साथ न देने के लिए दबाव जो डाला हुआ था। स्थिति का अनुमान लगाते हुए रसकपूर ने कहा, "कला की कद्र करने वाला ही आज कला की हत्या करना चाहता है !"

जयराज ने एक बार सिर उठाकर ऊपर देखा, फिर पुन नीचे देखने लगा।

महाराजा बोले, "रसकपूर नृत्य शुरू करो !"

"महाराजा ! मैं तब तक नही नाच सकती जब तक जयराज स्वय सितार बजाकर मेरा साथ नही देता।" मच पर से रसकपूर ने कहा।

"मेरा हुक्म है, जयराज सितार बजाये !"

महाराजा की आज्ञा का पालन करना अनिवाय था। जयराज मन-ही-मन बहुत खुश हुआ। महाराजा का आदेश होन से वह प्रधानमत्री और सामन्त चादसिह के कोपभाजन से बच गया। जयराज ने झटपट *सितार उठाया और उसकी उगलिया जादू की तरह सितार की तारा पर* थिरकने लगी !

रसकपूर ने नृत्य शुरू किया। उसन भी दक्षिण का भारत नाटयम ही प्रस्तुत किया। चद क्षणा म ही उसका एक एक अग अग थिरकन लगा। लोग रसकपूर का नत्य देखकर मत्रमुग्ध हो गय। रसकपूर का नृत्य विजयलक्ष्मी से कही अधिक सधा हुआ और कलात्मक था। नत्य की समाप्ति पर दशका न दून जाश के साथ करतल ध्वनि की।

रसकपूर अपनी विजय पर मुस्करायी। एक हल्की नजर प्रधानमत्री और साम त चादसिह के चेहरा पर डालकर वह मच स उतर कर महा-राजा की बगल मे आ गयी।

प्रधानमत्री और चादसिह का चेहरा पराजय से उतर गया था।

हर्षोन्नास के साथ जलसा समाप्त घोषित किया गया ।

अगने दिन जयराज की प्रधानमत्री के यहां पेशी हुई ।

जिस समय जयराज वहां पहुंचा, दूजी का साम त पहले स ही वहा बैठा हुआ था।

जयराज ने दोनो प्रमुखो का बारी-बारी से अभिवादन किया और एक कोन म खडा हो गया ।

प्रधानमत्री की भौहें चढी हुई थी। साम त चादसिंह तो आप स बाहर हुआ जा रहा था। जयराज दोनो की क्रुद्ध आखा को अधिक देर तक नहीं भेल सका और उसन अपनी नजरें झुका ली।

प्रधानमत्री ने कडक कर पूछा, "तुमने तो कहा था, रसकपूर उत्तरा खण्ड की रहने वाली है।"

"जी, हुक्म ! मैंने ठीक ही सुना था। रसकपूर उत्तराखण्ड की ही रहने वाली है !" जयराज ने निहायत नम्रता के साथ कहा ।

"ता फिर वह द ि णी का नाच कैसे जानती है ?" साम त चादसिंह ने गजते हुए पूछा ।

"मुझे भी इस बात का कल उसका नृत्य देखने के बाद ही पता चला है, हुजूर ! मै नही जानता, रसकपूर ने दक्षिणी-नृत्य कसे और कहा सीखा!"

जयराज उन इने गिने मुखियाओ मे से था, जो कभी विवादास्पद नही रह। अत उसके साथ अधिक सख्ती से पेश आना प्रधानमत्री का उचित प्रतीत नही हुआ। उन्होंने रसकपूर के अतीत की पूरी जानकारी हासिल कर लाने का आदेश देकर जयराज का विदा कर दिया।

"जो श्राना !" कहता हुआ जयराज दोनो प्रमुखो को नमन करता हुआ चला गया।

वस्तुत रसकपूर का अतीत क्या था, यह जयराज को भी पता न था। वह जयपुर म आने के पूर्व कहा रहती थी, क्या करती थी, उसन नृत्य

एव गायन का प्रशिक्षण कहाँ लिया, यह सब वह नहीं जानता था। उसने कभी रसकपूर से उसके अतीत के बारे मे पूछा भी नही था। उसे तो केवल इतना ही ज्ञात था कि वह उससे एक मदिर म मिली थी और उसका सुरीला गायन सुनकर जयराज मुग्ध हो गया था और उसे गुणीजनखान म ले आया था।

जब जयराज के निमत्रण पर रसकपूर गुणीजनखाने म आयी थी तो वह सादे वस्त्रो मे थी। उसके शरीर पर आम वेश्याओ की तरह के भडकीले वस्त्र नही थे। न ही उसकी चाल म चटक-मटक थी। उसके साफ-सुथरे चेहरे पर किसी प्रकार के वेश्याओ जैसे चिह्न भी नही थे। परतु यह सच था कि वह रामगज बाजार मे कभी मुजरा किया करती थी।

रसकपूर की कला और शालीनता से जयराज बहुत प्रभावित हुआ था और उसकी भेंट महाराजा से कराने का उसने वायदा किया था। जयराज ने अपना वायदा बखूबी निभाया था और उसी की बदौलत रसकपूर आज राजमहल मे थी।

अब रसकपूर के सुख मे जयराज किसी प्रकार की भी बाधा उत्पन्न नही करना चाहता था। कुछ दिनो बाद उसने स्वय ही प्रधानमत्री से जाकर कहा, "वह रसकपूर का अतीत ज्ञात करने मे असमर्थ है।' प्रधानमत्री को जयराज के इस नकरात्मक उत्तर से गुस्सा तो बहुत आया, पर उन्होने उसका कोई अहित नही किया।

परतु प्रधानमत्री और सामन्त चादसिंह शान्त नही बैठे रहे। वे रसकपूर को महाराजा से विलग करने के विभिन्न उपायो पर निरतर विचार-विमर्श करते रहे। वे दोनो राजमाता के पास भी पहुचे और उनसे महाराजा को समझाने के लिए निवेदन किया। राजमाता ने महाराजा के आचरण पर भारी खेद व्यक्त किया और दोनो प्रमुखो को बताया कि जब से उन्होने इस प्रकरण के बारे म सुना है तब से ही वे दुखी है। पर राजमाता ने अपने इकलौते बेटे के दिल को दुखाने मे अपनी असमर्थता व्यक्त कर दी। दोनो को यह कहकर राजमाता ने विदा कर दिया कि वे उसकी

तरफ से महाराजा को जाकर कह सकते हैं कि उनके इस आचरण से राजमाता खुश नहीं है।

दोनों प्रमुख सीधे महाराजा के पास पहुंचे और राजमाता की खिन्नता को उन्होंने बढ़ा-चढ़ाकर व्यक्त किया।

राजमाता का संदेश पाकर महाराजा उदास हो गये। परन्तु उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि इन दोनों प्रमुखों ने ही जाकर राजमाता को भड़काया होगा। महाराजा गंभीर हो उठे।

उधर सामन्त चांदसिंह ने अन्य सामन्तों को संदेश भेजकर जयपुर बुलाया और इस समस्या पर विचार करने का आग्रह किया। सामन्तों के सामने राज्य की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए चांदसिंह ने कहा, "रसकपूर की वजह से ही महाराजा का मन राजकाज में नहीं लग रहा है और वे अधिकांश समय छविनिवास में व्यतीत करते हैं। इससे राज्य की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गयी है। अंकुश और भय न रहने की वजह से अधिकारी स्वच्छंद हो गये हैं। उधर गुप्तचरों ने सूचना दी है कि मराठे पुनः जयपुर पर आक्रमण करने की योजना बना रहे हैं।

सामन्तों ने समस्या पर गम्भीर रूप से विचार किया और वहीं एक योजना पर विचार विमर्श करके उसे अंतिम रूप दे दिया।

योजना के अनुसार जनता की असली-नकली फरियादों का एक पुलिंदा लेकर प्रधानमंत्री महाराजा के पास पहुंचे। उन्होंने महाराजा से जनता के मामले निपटाये जाने के लिए एक आम दरबार आयोजित किये जाने की अनुमति मांगी। महाराजा ने इसकी अनुमति प्रधानमंत्री को दे दी।

शहर में आम दरबार के आयोजन का शीघ्र ही एलान कर दिया गया।

निश्चित दिवस पर, दिन के प्रथम पहर में दीवाने आम दरबार शुरू हुआ।

सामन्त, मंत्री, मुखिया, अधिकारी, फरियादी और नगर के आमंत्रित प्रतिष्ठित जन अपना-अपना स्थान ग्रहण कर चुके थे।

चोवदार की आवाज गूंजी—

"होशियार ! सरदारान हाशियार ! आम रियाया हाशियार ! राज राजेन्द्र महाराजाधिराज सवाई जगतसिहजी बहादुर पधार रहे है !"

महाराजा दरबार मे रसकपूर के साथ पधारे।

सभी सरदारो, मन्त्रियो, अधिकारियो व अन्य उपस्थित जनो ने खड़े होकर महाराजा को कोनिश की और फिर उनके बैठ जाने के बाद अपने अपने स्थान पर सब बैठ गये।

महाराजा से अनुमति प्राप्त कर प्रधानमन्त्री ने सभा की कारवाई शुरू की।

पहले कुछ फरियादी मामले उठाये गये। महाराजा ने बिना किसी जिरह-तर्क के सारे मामले चद मिनटो मे निपटा दिये। प्रधानमन्त्री ने परम्परानुसार फरियादी से बार-बार जिरह करने का प्रयास किया, पर महाराजा ने जिरह मे समय न खोकर वे सब मामले तुरन्त निपटा दिये।

महाराजा जब उठने को उद्यत हुए तभी सामन्त चादसिह अपने स्थान पर खडा हो गया।

'अन्नदाता ! राजराजेन्द्र !! मुझे सामन्तो की तरफ से अदब के साथ आपसे कुछ निवेदन करना है।"

महाराजा ने चादसिह को बोलने की अनुमति दे दी।

"अन्नदाता ! मुझे सामन्तो ने आपके चरणो मे कुछ अर्ज करने के लिए अधिकृत किया है, जिसे मुझे आज ही बयां करना है।'

महाराजा ने एक प्रश्नवाचक दृष्टि दूनी के सामन्त पर डाली।

"महाराजाधिराज ! अपराध क्षमा हो ! हम सब जयपुर रियासत के सामन्तगण यह महसूस कर रहे है कि कुछ दिनो से राज्य की राजनीतिक स्थिति बिगडती जा रही है। राज-काज सुचारू रूप से नही चल रहा है। छोटे-बडे दीवान, [मुखिया और अधिकारी स्वच्छन्द हो गये है। राज्य के खजाने मे निरतर ह्रास हो रहा है। सिर्फ आन्तरिक ही नही बाह्य स्थिति भी बिगडती जा रही है। गुप्तचरो ने प्रधानमन्त्री को सूचना दी है कि मराठे

पुन जयपुर पर आक्रमण करने की तयारी कर रहे है। उधर उदयपुर के महाराणा भीमसिंह द्वारा अपनी परमसुन्दर राजकुमारी कृष्णाकुमारी की आपके साथ सगाई कर देने से जोधपुर म भारी प्रतिक्रिया हुई है। गुप्तचरो ने यह भी सूचना दी है कि जोधपुर के राजा मानसिंह ने उदयपुर की राज कुमारी पर अपना हक जताया है और कृष्णाकुमारी का प्राप्त करने के लिए व तलवार तक उठाने का तैयार है। जाधपुर के राजा मानसिंह का कहना है कि राजकुमारी कृष्णाकुमारी की सगाई जयपुर के महाराजा से होने के पूव उसके भाई के साथ हुई थी। चूकि दुर्भाग्यवश वह शादी के पूव ही स्वग सिधार गया इसलिए अब पहले जोधपुर का ही राजकुमारी कृष्णा कुमारी पर हक बनता है। जाधपुर द्वारा इन्कार किये जाने पर ही राज कुमारी का विवाह जयपुर के महाराजा से होना सभव है। गुप्तचरा की ता यहा तक सूचना है कि जाधपुर के महाराजा मानसिंह ने जयपुर पर आक्र-मण करने के लिए सेना को तयार हो जाने का वकायदा आदेश भी दे दिया है। अनदाता ! इस प्रकार स्थिति बहुत गभीर बन चुकी है। इन हालत मे हम सब सामन्ता ने कुछ निश्चय किया है।"

"क्या निश्चय किया है ?" महाराजा न आतुर होकर पूछा।

' हम सब सामन्त सोच विचार कर इस नतीजे पर पहुचे है कि राज्य की निरन्तर बिगड रही स्थिति का प्रमुख कारण रसकपूर ही है "

"रसकपूर है ?" महाराजा ने साश्चय पूछा।

रसकपूर भी, जो सभा म मौजूद थी, अपना नाम आने पर चौंक पडी और सतक हो गयी।

"जी, महाराजा ! हमे बडे दुख के साथ कहना पड रहा है कि जब से अनदाता पर रसकपूर का साया पडा है, तब से राज्य का विनाश हाना शुरू हो गया है। यह एक अपशकुनी नारी है, जिसकी वजह से यह राज्य गत्त म "

' रुक जाओ चादसिंह '" महाराजा क्रोधित हो कर चिल्लाये। तुम लोगो का किसी राजमहिला पर आरोप लगाने का अधिकार नही है !"

दूनी के सामन्त ने दो बार महाराजा को कोर्निश करके अपना अदब व्यक्त किया और फिर उसी लहजे में बोला, "महाराजा ! अपराध क्षमा हो ! पर सत्य तो सत्य ही रहेगा। जब से रसकपूर का सान्निध्य अन्नदाता को मिला है, अन्नदाता राज काज भूल गये हैं। वे अपने कर्त्तव्यों एवं परम्पराओं को भी भुला बैठे हैं। हम निहायत अदब के साथ निवेदन करना चाहते हैं कि अब हम रसकपूर को राजमहल में एक दिन के लिए भी बर्दाश्त नहीं करेंगे। यह हमारा अंतिम फैसला है।" कह कर चांद-सिंह बैठ गया।

सभा में सन्नाटा छा गया।

महाराजा ने एक नजर वहां उपस्थित सभी सामंतों पर डाली। लगभग सभी सामन्त चांदसिंह के कथन का मौन समर्थन करते हुए सिर झुकाए बैठे थे।

इसके पूर्व कि महाराजा कुछ बोलते, रसकपूर अपने स्थान से उठकर खड़ी हो गई। सभा को सम्बोधित करते हुए वह बोली 'सम्माननीय सामन्तों ! मैंने दूनी के सामन्त की बात को बड़े गौर से सुना है। उन्होंने जो कुछ कहा है वह उन्होंने जयपुर राज्य के हित की अन्तर्निहित भावना से प्रेरित होकर कहा है। मैं उनकी भावना का आदर करती हूं। राज्य की आर्थिक और राजनीतिक दशा यदि बिगड़ रही है तो यह निश्चित रूप से चिंता की बात है। मैं महाराजाधिराज से निवेदन करती हूँ कि वे इस सम्बन्ध में गंभीरतापूर्वक विचार करें। परन्तु आदरणीय सामन्तों ! आपके द्वारा मेरे ऊपर जो दोषारोपण किया गया है, वह उचित नहीं है।"

"यह उचित है।" प्रधानमन्त्री, जो अब तक चुपचाप बैठे हुए थे, खड़े हो गये और चांदसिंह के कथन का उन्होंने समर्थन किया।

"यह उचित नहीं है !" रसकपूर ने पुनः शालीनता के साथ दोहराया।

"यह बिल्कुल सही है !" सामन्त चांदसिंह और प्रधानमन्त्री ने एक साथ कहा।

रसकपूर के एक तरफ सामन्त चांदसिंह खड़ा था और दूसरी तरफ

प्रधानमन्त्री। दोनों की आँखें गुस्से से लाल हो रही थीं। रसकपूर विचलित नहीं हुई। उसने कहा, "मैं दोनों माननीय प्रमुखों से पूछना चाहती हूँ क्या इस राजमहल में मेरे अलावा कोई महिला नहीं रहती?"

"रहती हैं! उन्हें राजमहल में रहने का अधिकार है। वे रानियाँ हैं सम्माननीया एवं आदरणीया हैं! पर तुम नहीं। तुम एक अति साधारण महिला हो जिसे राजमहल की ड्योढ़ी चढ़ने का भी अधिकार नहीं है।" चाँदसिंह ने कहा।

"जन्म के समय कोई महिला न साधारण होती है और न ही असाधारण। ईश्वर तो हर प्राणी में एक जैसे प्राण डालता है। आप उसे रानी या राजकुमारी से सम्बोधित करते हैं जो राजप्रासाद में जन्म लेती है और उसे बादी से सम्बोधित करते हैं जो एक झोंपड़ी में जन्म लेती है। मैं आप से पूछना चाहती हूँ कि क्या यह न्यायसंगत है? कौन बड़ा है और कौन छोटा है, इसका निर्धारण तो गुणों के आधार पर होना चाहिए। चन्द्रगुप्त एक प्रतापी राजा था, उसे क्या किसी रानी ने जन्म दिया था? वह एक दासी का पुत्र था। पन्ना धाय को क्या आप भूल गये? मैं पुनः आपसे कहना चाहूँगी कि व्यक्ति महान जन्म से नहीं, अपने गुणों से होता है!"

कुछ क्षणों के लिए सभा में खामोशी छा गई। सभी सभासद इस 'तर्क-युद्ध' को गंभीरता के साथ सुन रहे थे।

"तुम भ्रम उत्पन्न करके अपने को राजप्रासाद में स्थापित करना चाहती हो। बल्कि इससे भी एक कदम आगे बढ़ गई हो। चन्द्रगुप्त का उदाहरण देकर तुम यह घोषणा करना चाहती हो कि तुम्हारी कोख से पैदा होने वाला बच्चा जयपुर राज्य का उत्तराधिकारी होने का दावा कर सकता है!"

सामन्त चाँदसिंह की इस बात पर सभा में उपस्थित सभी सभासद चौंक पड़े।

"नहीं! हर्गिज नहीं! मेरी ऐसी कोई ख्वाहिश नहीं है। मैंने तो चन्द्रगुप्त का उदाहरण देकर कहना चाहा था कि उसे एक ऐसी महिला ने

जन्म दिया था जो एक अति साधारण महिला थी। वस्तुत पृथ्वी पर मौजूद हर नारी म असीम शक्ति विवेक और सहिष्णुता होती है। वह पुरुष स कही अधिक सजग और गुणवान होती है। स्वाभाव से नारी ता पुरुष स कही अधिक वफादार होती है। यह पुरुष की गलती है कि वह कभी-कभी अपने सामाजिक अधिकारा का दुरुपयोग कर अपनी बबर इच्छाओ की पूर्ति के लिए नारी की कमजोरी का फायदा उठाकर उस पथभ्रष्ट कर देता है। नारी मे गुणा का विकास उसके सही चिंतन से होता है न कि भौतिक साधना से। सिफ राजप्रासाद मे जन्म लने या प्रवेश पा लेने से ही नारी सवगुण-सम्पन्न नही हो जाती। मैं ऐसी अनेक रानियो के उदाहरण द सकती हू जिनकी दुर्बुद्धि और छल कपट से अनेक सल्तनतें तबाह हो गइ!"

"हमे नही सुनना ऐसी रानिया के उदाहरण! हम सजन म विश्वास करते है, विनाश मे नही! हम तो बस इतना जानते है कि महाराजा जगतसिंह की बगल म बैठी हुई यह रसकपूर एक गैरखानदानी महिला है जिसे राजमहल मे रहने का कोई अधिकार नही है!' चादसिंह ने कहा।

'किसे कहते है आप खानदानी और किसे कहते है गरखानदानी? वद कमर मे जब कोई जन्म लेता है ता वह जन्म के साथ ही खानदानी हो जाता है और खुले आकाश म जब काई पैदा होता है तो वह जन्म क साथ ही अकुलीन हो जाता है! अच्छा, मै मान लेती हू मैं अकुलीन हूँ। पर क्या मैं सभा म मौजूद समस्त सामन्ता से पूछ सकती हू क्या कभी आपने मेरी-जसी किसी अकुलीन नारी का सानिध्य प्राप्त करने की चेष्टा नहा की? अभी उसी दिन आमर म आयोजित जलस मे सामन्त चादसिंह ने दक्षिण का नाचन वाली को एक सहस्र स्वण मुद्राए देकर उसे दूनी म चलकर रहने का निमत्रण दिया था। सुख भोगन के लिए मन का चैन पाने के लिए, मुझ-जैसी गैरखानदानी महिलाओ की शरण ली जाती है और सम्मान दने क लिए राजप्रासाद म जन्म लना अनिवाय माना जाता है! मैं तो कहती हू ऐसी हर नारी सम्मान और आदर की पात्र है जो पुरुष को सुख, सहयोग

और विवेक देती है ।"

रसकपूर के तर्कों से सामन्त चांदसिंह विचलित हो गया। बेबस चांदसिंह ने सामने खडे प्रधानमन्त्री की ओर देखा।

प्रधानमन्त्री ने कहा, "इन मूल्यो का निधारण हमारे पूवजो ने किया है। वे अविवेकी नही थे। वे जानते थे कि स्त्री पुरुष की कमजोरी होती है। अत उन्होने कुछ प्रतिबन्धात्मक नियम स्त्री के लिए बनाये हैं। राजा की बगल में सिर्फ रानी ही बठ सकती है, पुरुष की कमजोरी का फायदा उठाने वाली साधारण नारी नही।"

"स्त्री पुरुष की कमजोरी होती है यह सिर्फ कमजोर पुरुष ही सोचता है। स्त्री पुरुष के लिए शक्ति होती है यह पराक्रमी पुरुष कहता है। पुरुष ने हमेशा अपनी कमजोरी को नारी में आरोपित कर स्वय को बेकसूर सिद्ध किया है। खुद का इन्द्रिया पर वश रहता नही, भोग विलासिता के प्रति अपनी आसक्ति को पुरुष रोक नहीं पाता और इन सबके लिए नारी को दोषी बता देता है।"

रसकपूर की बात से चांदसिंह और प्रधानमत्री दोनो ही आवेश म आ गए और उससे एक के बाद एक तर्क करने लगे।

चांदसिंह—"नारी जन्म से ही दम्भी होती है।"

रसकपूर—"नारी जन्म से स्नेहमयी होती है।"

प्रधानमत्री—"नारी पुरुष को दिग्भ्रान्त कर देती है।'

रसकपूर—"नारी पुरुष को दिशा देती है।"

चांदसिंह—"नारी अपने रूप के मायाजाल म पुरुष को फसाकर अस्तित्वहीन बना देती है।"

रसकपूर—"नारी अपने रूप-सौन्दय से पुरुष को पुरुषत्व प्रदान करती है।

प्रधानमत्री—'नारी कुबुद्धि को जन्म देती है।"

रसकपूर—'नारी विवक की जननी है।"

चांदसिंह—'नारी समस्या है।"

रसकपूर—"नारी समाधान है।"

प्रधानमन्त्री—"नारी के कारण अनेक महल ढह गये।"

रसकपूर—"नारी के कारण ताजमहल बन गये।"

चांदसिंह—"नारी उन्माद है।"

रसकपूर—"नारी आह्लाद है।"

प्रधानमन्त्री—"नारी जकडन है।"

रसकपूर—"नारी हृदय की धड़कन है।"

चांदसिंह—"नारी पहेली है।"

रसकपूर—"नारी सहेली है।"

प्रधानमन्त्री—"नारी बला है।"

रसकपूर—"नारी कला है!"

चांदसिंह—"नारी विनाश है।"

रसकपूर—"नारी प्रकाश है।"

दोनों प्रमुख थक्कर निरुत्तर हो गये।

परन्तु रसकपूर ने अपना तर्क जारी रखा, "आप लोगों का मुझ पर व्यक्त किया जा रहा आक्रोश निरर्थक है। मैं यहां राजप्रासाद में बसने के लिए नहीं आयी थी। मैं तो यहां महज नृत्य द्वारा आप लोगों का मनोरंजन करने आयी थी। गुणीजनखाना के मुखिया जयराज के अनुरोध पर ही मैंने यहां आकर अपनी कला का प्रदर्शन किया था। आप लोगों ने भी शरद उत्सव की रात मेरी कला की कद्र की थी पर आप लोगों की कद्र क्षणिक थी। महाराजा विवेकी थे इसलिए इन्होंने मेरी कला की पूर्ण कद्र की।

चांदसिंह ने रसकपूर के इस कथन को बेइज्जती के रूप में लिया। वह अपना सन्तुलन खो बैठा। उसका स्वर गुस्से से भर गया "तुम हमें अविवेकी सिद्ध कर रही हो। वस्तुतः तुम स्वयं अविवेकी हो! बल्कि तुम विवेक शून्य हो! तुम वेश्या हो!"

खामोश!" महाराजा गरज उठे। उनकी आंखों से अंगारे बरसने लगे, "चांदसिंह!

तुमने रसकपूर का अपमानित कर के घार अपराध किया है। तुम पर दो लाख रुपया का जुमाना किया जाता है।"

सजा सुनाकर महाराजा रसकपूर की बाहृ पकडकर सभा से उठकर चले गये।

कानाफूमी के साथ सभा विसर्जित हा गयी।

सभा मे जा कुछ हुआ था, उससे रमकपूर खुश नही थी। हालाकि, साम त चादसिंह और प्रधानमत्री के हर तक का उसने उत्तर दिया था पर वे अपने पूर्वाग्रहा से इतन ग्रस्त थे कि उनका हृदय रसकपूर नही जीत पायी थी। चादसिंह पर दो लाख रुपया का जुमाना किया जाना उसे और अधिक भडका सकता था। रसकपूर ने सारी परिस्थिति पर समुचित विचार करके अपने भावी जीवन की रूप-रेखा निश्चित कर ली।

रसकपूर न महाराजा की राजकाज म दिलचस्पी उत्पन्न करने की कोशिश की। वह स्वय भी राजकार्यों मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगी। उसने कई-एक मुखियाओ और अधिकारिया का अपने अनुकूल बना लिया।

चादसिंह का गुस्सा शात करने के उद्देश्य से रसकपूर ने महाराजा से उस पर किया गया जुर्माना माफ कर देने का आग्रह किया, पर महाराजा नही माने। भरी सभा म उनकी प्रेयसी को वेश्या कहे जाने की पीडा अब तक महाराजा का सता रही थी। महाराजा ने रसकपूर से साफ साफ कह दिया कि वे जुमाना माफ नही करेंगे और भविष्य म अगर किसी अन्य साम त ने एसा कहन की धृष्ठता की तो उसकी जागीर जप्त कर लेंगे।

रसकपूर जानती थी, सामन्त चादसिंह क्रोधी स्वभाव का जिद्दी साम त है। वह अकेला भी नही है। उसको प्रधानमत्री तथा कुछ अन्य प्रभावशाली साम ता का समथन भी प्राप्त है। वह कभी भी बवडर खडा कर सकता है।

रसकपूर ने सामन्त चादसिंह से मिलने का निश्चय किया।

रसकपूर ने अन्त पुर की अपनी एक विश्वस्त सेविका का सामन्त चादसिंह को बुलाने भेजा, परन्तु चादसिंह ने आने से इन्कार कर दिया।

रसकपूर ने इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न नही बनाया और वह स्वय चादसिंह से मिलने मोती डूगरी किले म जा पहुची। ज्योही रसकपूर की बग्घी किले के द्वार पर आकर रुकी, द्वारपाल ने अदर जाकर चादसिंह को सूचित किया। चादसिंह ने झुझलाते हुए अपने अगरक्षक से रसकपूर को बाहरी बैठक म बैठाने के लिए कहा।

चादसिंह ने रसकपूर से अकेले म मिलना उचित नही समझा। उसने तुरत घुडसवार भेजकर प्रधानमत्री को बुलवाया। पर घुडसवार वापस खाली हाथ लौट आया। प्रधानमत्री कुछ आवश्यक मत्रणा करने के सिलसिले म उस समय खण्डला गये हुए थे। विवश होकर चादसिंह को अकेले ही रसकपूर से मिलना पडा। उसने गुमाश्ता भेजकर रसकपूर से पर्दा कर लेने को कहा।

जब भरी सभा मे उसने कभी पर्दा नही किया तो अब पर्दा करने की क्या तुक थी! फिर भी महज चादसिंह की बात रखने के लिए रसकपूर ने एक झीनी चुनरी पलको के नीचे तक बाध ली।

चोबदार ने चादसिंह के आने की सूचना दी।

चादसिंह द्रुतगति से अन्दर प्रविष्ट हुआ और बिना रसकपूर की ओर देखे धम से बैठ गया। चादसिंह के इस गुस्सैल आचरण से रसकपूर मन ही मन हस पडी, पर उसने अपने चेहरे पर गम्भीरता बनाये रखी।

'यदि आज्ञा हो तो मै कुछ निवेदन करू ?' रसकपूर ने कहा।

चादसिंह ने कोई उत्तर नही दिया वह चुपचाप बैठा रहा।

रसकपूर ने समय बर्बाद करना उचित नही समझा, उसने पूर्ण नम्रता के साथ पूछा "यदि आदरणीय सामन्त चाहे तो जो कुछ मेरे कारण हुआ है उसका खामियाजा भी स्वय मैं ही भुगतू ?"

'क्या मतलब ?' चादसिंह ने चौंककर पूछा।

"यदि आपकी शान मे गुस्ताखी न हो तो महाराजा ने सभा म जो जुमाना आप पर किया है, उसे मैं अदा कर दू ?"

"रस कपूर !" चादसिह लगभग चीखता हुआ खडा हो गया। उसके दात बज उठे। "तुम अपनी औकात भूल बैठी हो। महाराजा तुम्हारे रूप-सौन्दय क जाल मे फस सकत ह दूनी का सामत नही। तुमने यहा आकर आज जो मरा अपमान किया है, मैं उसका बदला लेकर रहूगा।" यह कहकर चादसिह तजी से बाहर चला गया।

रसकपूर का डूगरी किले मे आन का प्रयोजन निष्फल हो गया था। वह वापस चन्द्रमहल लौट आई।

रसकपूर मोती डूगरी गयी ता थी चादसिह का हृदय परिवतन करने, पर हो उल्टा गया। रसकपूर की बात न आग मे घी का काम कर दिया था।

इसके बाद तो चादसिंह विभिन्न उपाया से रसकपूर का अपमान करने की तरह तरह की याजनाए बनाने लगा।

अपने जन्म-दिवस के उपलक्ष मे चादसिह न दूनी म एक भारी जलसे का आयाजन किया। उसन सभी सामन्ता को आमन्त्रित किया। महाराजा जगतसिंह को भी निमन्त्रण भेजा पर साथ मे यह भी कहला भेजा कि व चाह ता सभी रानिया के सग दूनी पधारें, परन्तु रसकपूर का साथ म न लायें।

इस प्रकार चादसिह न रसकपूर का अपमान करने की कोशिश ता की पर वह अपने उद्देश्य मे सफल नही हो सका, क्याकि महाराजा न चादसिंह को कहलवा भेजा "जहा रसकपूर नही होगी, वहा मैं भी नही हूगा।"

इससे चादसिह का क्रोध और भडक उठा। अब तो वह रसकपूर के पूण विनाश की योजना बनान लगा।

मोती डूगरी स लौट आन के बाद रसकपूर चादसिह की तरफ से और अधिक सतकता बरतने लगी। उसन अपन विश्वस्त गुप्तचर चादसिंह के पीछे लगा दिय।

गुप्तचरो ने रसक्पूर को सूचना दी कि चादसिंह ने विशिष्ट सामन्तो की एक गुप्त बैठक नाहरगढ किले मे की है और वहा रसकपूर को महल म से निकाल देने पर विचार किया गया है । पूरी सभावना है कि आगामी वसन्तोत्सव के अवसर पर ये सामन्त कुछ गडबड करेंगे ।

इधर महाराजा ने वसन्तोत्सव के दिन रसक्पूर को चन्द्रमहल मे एक रानी के रूप मे प्रवेश कराकर उसे बाकायदा जयपुर की रानी घोषित किये जाने का कार्यक्रम बना रखा था । और इसके लिए उन्होंने अपने विश्वस्त सामन्तो का सहयोग भी प्राप्त कर लिया था । प्रधानमत्री तथा सामन्त चादसिंह के विरोध की महाराजा ने जरा भी परवाह न की थी ।

गुप्तचरो की सूचना सही थी । सामन्त चादसिंह ने वसतोत्सव के दिन, एक रानी के रूप मे रसकपूर के चन्द्रमहल म प्रवेश को रोकने के लिए कई सामन्तो को तैयार कर लिया था ।

चन्द्रमहल को सजाने का काय शुरू हो गया ।

सामन्त चादसिंह न कुछ सहयोगी सामन्तो के साथ महाराजा से भेंट की और उनसे इस विचार को त्याग देने का अनुरोध किया । राज माता ने भी इस काय को उचित नही समझा और रसक्पूर को एक रानी के रूप मे प्रतिष्ठापित न करने के लिए महाराजा पर दबाव डाला । महाराजा न यह कहकर कि वे उनकी बातो पर विचार करेंगे, सब को विदा कर दिया । परन्तु मन-ही मन उन्होने अपनी योजना को मूतरूप देने का पक्का निश्चय कर लिया था ।

उधर रसक्पूर ने भी तय कर लिया था कि वह राजमहल म रहे या न रहे परन्तु सामन्त चादसिंह के कहने पर महल कदापि नही छोडेगी । उसने सामन्त से लोहा लेने की ठान ली ।

रसक्पूर ने महाराजा से मिलकर वसन्तोत्सव की योजना बनायी ।

जयपुर शहर के चौराहा, चौपालो और चौपडो पर ढिंढोरची द्वारा ऐलान कराया, "राजराजेन्द्र महाराजाधिराज सवाई जगतसिंह जी बहादुर

वसन्तोत्सव के दिन अपनी नयी रानी रसकपूर के साथ महल म शाही परम्परा के अनुसार विधिवत् प्रवेश करेंगे। राजा और रानी की सवारी का जुलूस जयगढ से चलकर मानिक चौक चौपड से होता हुआ चद्र महल पहुचेगा। आम आदमी से कहा जाता है कि वह जुलूस मे अवश्य शामिल हो।"

रसकपूर के महल मे विधिवत प्रवेश किये जान की सावजनिक घोषणा से चादसिह के अनुयायी सामन्तो म खलबली मच गयी। उनकी गुप्त मत्रणाए पुन शुरू हो गयी।

पर सामन्ता का एक वग ऐसा भी था जो महाराजा के इस कदम को गलत नहा मानता था। उनका कहना था कि राजमहल म रसकपूर का विधिवत् प्रवश हा जाने से सब कुछ नियमबद्ध हो जायेगा तथा सब राज कुल की शान के अनुकूल हा जायगा। लाग तब यह नही कह पायेंगे कि एक नाचने वाली 'भक्तन' महल मे रह रही ह।

चादसिह के समथक सामन्ता का कहना था कि वसन्तोत्सव पर रसकपूर का राजमहल म विधिवत प्रवेश हो जाने से वह नियमानुसार पटरानी बन जायेगी, और तब हर व्यक्ति के लिए उसके सामने सिर झुकाना, आदर प्रकट करना, अनिवाय हो जायगा। और यह एक राजपूत की शान के खिलाफ होगा कि वह एक 'भक्तन' के आगे सिर झुकाय।

सामन्ता के दोनो खेमा म रस्साकशी शुरू हो गयी। दाना वग विभिन्न सरदारो जागीरदारा एव प्रभावशाली व्यक्तिया को अपने-अपने पक्ष मे करन म जुट गय। प्रधानमत्री स्पष्टत चादसिह के वग के साथ थ। चादसिह के इस गुट को राजमाता की सहानुभूति भी प्राप्त थी।

दूसर खेमे का नेतत्व एक वयोवद्ध परन्तु कूटनीतिज्ञ ब्राह्मण पडित शिवनारायण मिश्र कर रहा था। पडित शिवनारायण मिश्र ने राजभक्त सामन्ता का सगठित कर 'प्रवेश' को सफल बनाने के लिए पैतरेबाजी शुरू कर दी। इसके लिए महाराजा से उसे सब तरह की सुविधाए प्राप्त थी।

था। घुडसवार सना के पीछे एक विशाल रथ पर रसकपूर के परिधान, आभूषण शृ गार-सामग्री (जो सामान्यत दहज म आती है) रखी हुई थी। रथ क पीछे दस सामन्त हाथा म नगी तलवारें लिय हाथिया पर सवार थे। इनक पीछे कलात्मक ढग से सजाय गय रथ पर महाराजा जगतसिंह और रसकपूर विराज रहे थे। महाराजा जगतसिंह न नीली अचकन पर गुलाबी साफा बाधा हुआ था। रसकपूर ने गुलाबी वस्त्र पहने हुए थे जिन पर नीला उत्तरीय हवा के झोका से बार-बार फडफडा जाता था।

महाराजा क रथ क पीछे पन्द्रह हाथी बीस ऊट तथा अन्त म पुन घुडसवार सना की एक टुकडी थी।

विरोध और समथन क तनावपूर्ण वातावरण म निकल इस जुलूस को दखन के लिए राजमाग के दाना आर काफी सख्या म लाग खडे थे। दशको क चहरा पर कौतूहल और रसकपूर का दखने की उत्कण्ठा क मिश्रित भाव थ।

जारावरसिंह द्वार से होता हुआ जुलूम जब चादी की टकसाल के पास पहुचा, एक गुप्तचर ने महाराजा का इशारा कर कुछ कहना चाहा। महाराजा ने रथ रुकवाकर गुप्तचर की सूचना सुनी। सूचना सुनकर वे किंचित चिंतित हो उठे। गुप्तचर की सूचना स अब तक मुस्करा कर जनता का अभिवादन स्वीकार कर रही रसकपूर भी गभीर हो गयी। महाराजा न अगरक्षका एव सना क प्रधान का बुलाकर कुछ निर्देश दिय।

जैसी कि गुप्तचर न महाराजा का सूचना दी थी सिटी डयोढ़ी दरवाज पर सामन्त चादसिंह का दल तलवार तान खडा था।

जुलूस सिटा डयोढी पर आकर रुक गया। ढोल बजने बन्द हा गये। नत्य रुक गया। एक गहरी निस्तब्धता जुलूस क प्रारम्भ स अन्त तक छा गया।

सामन्त [illegible] क रथ क पास आया। उसने तलवार झुका [illegible] अपने दल का सदश सुनाया, अन्नदाता। राज

पडित शिवनारायण मिश्र ने चार्दसिंह को कहला भेजा कि अगर वह रसकपूर के राजवश म प्रवश का महज इसलिए विरोध कर रहा है कि वह एक 'भक्तन' है, जिसके मा-बाप का पता नही तो वह रसकपूर को अपनी बेटी बनाने के लिए तैयार है और ब्राह्मणत्व प्रदान करने के लिए 'यज्ञ' का आयोजन भी किया जा सकता है।

चार्दसिंह ने इस प्रस्ताव को नामजूर कर दिया। उसन पडित मिश्र को कहला भेजा कि वह इस प्रवेश को हर सम्भव तरीके से रोकेगा।

अठारह वर्षीय अल्प वयस्क महाराजा चार्दसिंह और उसके समथको द्वारा किय जा रहे विरोध को दवाने मे भारी कठिनाई महसूस कर रहे थे। चार्दसिंह की पैतरेबाजी का वे शिकार होते गय और इस वग द्वारा उद्वेलित किये जा रहे जनमानस को व अपने अनुकूल नही बना पाय। फिर भी व निश्चय पर अडिग रह।

गुप्तचरा द्वारा विभिन्न वर्गों एव नगर की जनता की प्रतिकूल प्रतिक्रिया की सूचनाओ के बावजूद महाराजा जगतसिंह ने अपन निश्चय की क्रियान्विति के लिए तैयारी शुरू कर दी। व रसकपूर को राजमहल म स्थापित करने क लिए दृढप्रतिज्ञ दिखायी दे रहे थे।

निश्चित दिवस पर, कडी सुरक्षा के अन्दर जयगढ स रसकपूर के साथ महाराजा जगतसिंह की सवारी निकली।

सामन्ता के एक वग क विरोध के बावजूद जुलूस पूरी भव्यता क साथ निकला। जुलूस म सबसे आग ढोल और बिगुल बजान वाल चल रह थे। उनके पीछे रग बिरग परिधानो म भक्तन नृत्य कर रही थी। घूमर नृत्य के समय नृत्यागनाओ की लम्बी वशवर्तिकाए हवा म झूल जाती था। उनके उत्तरीय बार-बार हवा मे लहरा जात थे, जिन्ह व तर्जो से पकडती और अपनी कमर म खास लेती। नृत्यागनाओ के पीछे वाली बैलगाडी पर नगाडा बज रहा था। नगाडे के पीछे शहनाईवाल्क थ और उनक बाद एक सहस्र पैदल सैनिक चल रह थे। इनके पीछे राजचिह्न लिए हुए पाच पहरी चल रहे थे। राजचिह्न के पीछे घुडसवार सेना का एक दस्ता

था। घुडसवार सेना के पीछे एक विशाल रथ पर रसकपूर के परिधान, आभूषण शृ गार-सामग्री (जो सामान्यत दहज म आती है) रखी हुई थी। रथ के पीछे दस सामन्त हाथा मे नगी तलवारें लिय हाथिया पर मवार थे। इनके पीछे कलात्मक ढग से सजाय गय रथ पर महाराजा जगतसिह और रसकपूर विराज रहे थे। महाराजा जगतसिह ने नीली अचकन पर गुलाबी साफा बाधा हुआ था। रसकपूर ने गुलाबी वस्त्र पहने हुए थे जिन पर नीला उत्तरीय हवा के झोको से बार-बार फडफडा जाता था।

महाराजा के रथ के पीछे पन्द्रह हाथी, बीस ऊट तथा अन्त मे पुन घुडसवार सेना की एक टुकडी थी।

विरोध और समथन के तनावपूण वातावरण म निकले इस जुलूस को दखन के लिए राजमाग मे दाना ओर काफी सख्या म लोग खडे थे। दशको के चहरा पर कौतूहल और रसकपूर का दखने की उत्कण्ठा के मिश्रित भाव थे।

जोरावरसिंह द्वार से हाता हुआ जुलूस जब चादी की टकसाल के पास पहुचा, एक गुप्तचर ने महाराजा को इशारा कर कुछ कहना चाहा। महाराजा ने रथ रुकवाकर गुप्तचर की सूचना सुनी। सूचना सुनकर वे किंचित चिंतित हो उठे। गुप्तचर की सूचना से अब तक मुस्करा कर जनता का अभिवादन स्वीकार कर रही रसकपूर भी गभीर हो गयी। महाराजा न अगरक्षका एव सेना के प्रधान को बुलाकर कुछ निर्देश दिय।

जसी कि गुप्तचर न महाराजा का सूचना दी थी, सिटी ड्योढी दरवाज पर साम त चादसिंह का दल तलवार तान खडा था।

जुलूस सिटी डयोढी पर आकर रुक गया। ढाल बजने ब द हा गये। नृत्य रुक गया। एक गहरी निस्तब्धता जुलूस के प्रारम्भ से अ त तक छा गया।

एक साम त महाराजा के रथ के पास आया। उसन तलवार झुकाकर कोर्निश की और फिर अपने दल का सदश सुनाया, 'अन्नदाता! राज

राजेन्द्र ! हम सब सामन्त आपका पूरा आदर करते हैं और करते रहेंगे। हम आपके प्रति वफादार हैं, और रहेंगे। पर अन्नदाता ! हम रसकपूर को एक रानी का सम्मान देने मे असमर्थ हैं। हम रसकपूर की सवारी को राजमहल मे प्रविष्ट नही होने देंगे। हम अपना खून बहा देंगे पर अपने निश्चय से नही डिगेंगे !" सामन्त बिना महाराजा का उत्तर सुने, अपनी बात कहकर, अपने खेमे मे लौट गया।

महाराजा जगतसिंह गुस्से से भर उठे। उन्होने तत्काल सेना प्रधान को बुलाया।

सेना प्रधान ने आकर महाराजा को बताया कि सामन्तों का सामना करने के लिए सेना तैयार खडी है, सिर्फ महाराजा के आदेश का इतजार है।

महाराजा का हाथ तलवार की मूठ पर जा चुका था। वे उठकर खडे होने वाले थे कि रसकपूर ने उनकी बाह पकडकर रोक लिया। "राजन ! क्या फूलो से लदा सुवासित हुआ यह राजमार्ग अब राजपूतो के खून से सनेगा ? क्या एक स्त्री की खातिर ऐसे पराक्रमी, वीर योद्धाओ को जिन्हे दुश्मनो के बलमर्दन के लिए तैयार किया गया है, आपस म ही लड-मर जाना चाहिए ? मैं राजमार्ग पर उनके खून का एक भी कतरा गिरने के पूर्व अपना प्राणान्त कर देना उचित समझूगी !'

यह सुनकर महाराजा के माथे पर बल पड गये, उन्होने पूछा, "फिर ?'

'लौट चलिये !"

प्रतिष्ठा का सवाल था। महाराजा ने रसकपूर के प्रस्ताव को नामजूर कर दिया। उन्होने मत्रणा के लिए पडित शिवनारायण मिश्र को बुलवाया।

पडित शिवनारायण मिश्र ने महाराज को एक युक्ति सुझायी। इस युक्ति के अनुसार राजभक्त सामन्तो को चांदसिंह के सामन्तो के साथ तर्क वितर्क म उलझा दिया गया। दोनो पक्ष एक दूसरे को समझाने म लग गये। यह प्रक्रिया चल ही रही थी कि महाराजा का रथ गोविन्द देवजी के मदिर की तरफ वाले पिछवाडे द्वार की ओर मोड दिया गया

और वहीं से रसकपूर का राजमहल में प्रवेश करा दिया गया।

रसकपूर के विधिवत प्रवेश हो जाने के बाद राजमहल के शिखर पर पहरा रहे राजध्वज के नीचे रसकपूर के 'रानी सूचक' ध्वज को फहरा दिया गया और बिगुल बजा दिया गया।

ध्वज को देखकर चांदसिंह-वर्ग के सामन्त हक्के बक्के रह गये और पण्डित शिवनारायण मिश्र को 'धूर्त, कपटी, नीच' कहते हुए, तलवारों को म्यानों में रखते हुए लौट गये।

चांदसिंह के व्यवहार से महाराजा बहुत क्रोधित थे। वे चांदसिंह को कड़ा सबक सिखाना चाहते थे। परन्तु रसकपूर और महाराजा के अन्य राजनीतिक सलाहकारों ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। अभी चांदसिंह को छेड़ने का समय नहीं था। जयपुर रियासत पर बाहरी आक्रमणों के खतरे के बादल मंडरा रहे थे। महाराजा जगतसिंह गुस्सा पीकर रह गये। लेकिन उन्होंने प्रधानमंत्री को तत्काल बर्खास्त कर दिया और उनके स्थान पर पंडित शिवनारायण मिश्र को प्रधानमंत्री नियुक्त कर दिया।

पंडित शिवनारायण मिश्र ने प्रधानमंत्री का पद सम्भालने के साथ ही महाराजा को 'रसकपूर प्रकरण' सदैव के लिए समाप्त कर देने की राय दी। रसकपूर का राजमहल में विधिवत प्रवेश तो हो ही चुका था परन्तु उसे स्थायी करने के लिये कुछ कदम उठाये जाने अभी शेष थे। इसके लिए पण्डित शिवनारायण मिश्र ने महाराजा को रसकपूर के नाम का सिक्का चलाने की राय दी। महाराजा ने इस राय पर तुरंत अमल किया और टकसाल के मुखिया को बुलाकर रसकपूर के नाम का सिक्का ढालने का आदेश दे दिया।

राजमहल में प्रवेश पा लेने के बाद रसकपूर बहुत संजीदगी से सारे काम करने लगी। उसने राजकर्मचारियों को अपने पक्ष में करना और पंडित शिवनारायण मिश्र को राजकाज में सहयोग देना शुरू कर दिया।

थोड़े ही समय म वह राजकर्मचारियों और प्रशासन पर हावी हो गयी।

महाराजा की अनिच्छा की वजह स राजकाज के प्रति हो रही उपेक्षा को रसकपूर की सक्रियता न काफी हद तक कम कर दिया और कुछ समय से प्रशासन म आ गयी उच्छृंखलता भी अब धीरे धीरे कम होन लगी।

रसकपूर ने स्वय अपनी और राजमहल म रहन वाल लगभग सभी व्यक्तियों की दिनचर्या को नियमित कर दिया।

प्रात काल, भोर म, राजमहल भजनो की सुरीली आवाज स गूज उठता। रसकपूर स्वय तानपूरा लेकर भजन गाती। उसकी आवाज सुनकर महाराजा जगतसिंह जाग जाते और करवटें बदलकर रात की खुमारी को दूर भगान का प्रयास करत।

सारा राजमहल नियमित हो गया था, पर महाराजा का प्रमाद ज्यों-का त्यों बना हुआ था।

हर सुबह एक घटे के पूजन के बाद रसकपूर अपने हाथ स चरणामृत लाकर अलसा रहे महाराजा को पिलाती और उन्ह पीठ से सहारा देकर पलग से उठा देती। मोतियों की मालाओं की छन छन के बीच महाराजा रसकपूर की बाह पकड लेते और कहते "आज तो तुम्हारी आवाज और भी मधुर लग रही थी।' महाराजा तब अपने ओठ उसकी गदन पर जाकर टिका देते और कहते, "कितना रस छिपा हुआ है यहा!"

रसकपूर महाराजा को हल्के से झिडक देती, "आपका तो खुमार उतरता ही नहीं। सुबह-सुबह भगवान का नाम लिया कीजिये। इससे हम दोनों का और जयपुर रियासत की जनता का भी लाभ होगा।'

"ले लूगा! भगवान का नाम भी ले लूगा! पहले इस भगवान की अराधना तो पूरी हो जाय।' महाराजा रसकपूर को आलिंगनबद्ध कर लेते। वह कसमसाकर रह जाती।

सदा की भाति प्रात जब रसकपूर भजनोपरात चरणामृत लेकर महाराजा के यहा जा रही थी तो द्वार के बाहर गुप्तचर विभाग के

मुखिया को उसने खडे देखा। अवश्य कोई खास बात होगी! रसकपूर किसी भावी शका से ग्रस्त हो गयी।

"आप सुबह-सुबह यहा ?" रसकपूर ने गुप्तचर विभाग के मुखिया से पूछा।

मुखिया ने रसकपूर को अदब जताया और बताया कि एक बहुत ही गभीर समस्या आ पडी है। रात मे उन्हे सूचना मिली है कि जोधपुर की विशाल सेना जयपुर पर आक्रमण करने के उद्देश्य से कूच कर चुकी है।

बात वास्तव मे बहुत गम्भीर थी। तुरत रसकपूर गुप्तचर विभाग के मुखिया को अपने साथ अदर ले गयी।

सदैव की तरह आज भी महाराजा ने पायल की रुन झुन की आवाज सुनकर उचककर रसकपूर का अभिवादन किया। परन्तु रसकपूर के पीछे गुप्तचर विभाग के मुखिया को देखकर क्षोभ का एक हल्का-सा भाव उनके चेहरे पर तैर गया।

"तुम कैसे अदर आ गये ?"

'इन्हे मैं अपने साथ लायी हू।"

"क्या प्रिय ? ऐसा क्या ? आज 'प्रथम दर्शन' मे यह व्यवधान क्यो ?"

'इन्हे आपको एक बहुत जरूरी सूचना देनी है!'

"ऐसी कौन-सी जरूरी सूचना है जिसे हम दिन मे नही सुन सकते थे ?"

मुखिया ने महाराजा के प्रति अदब जताया और कहा, "अन्नदाता! रात मे जोधपुर के गुप्तचरो की सूचना आयी है कि जोधपुर की विशाल सेना जयपुर पर आक्रमण करने के लिए कूच कर चुकी है। मैंने हुजूर को रात मे जगाना उचित नही समझा!

यह सुनकर महाराजा गभीर हो गये।

गुप्तचर विभाग के मुखिया ने प्राप्त सारी सूचनाए सब विस्तार से महाराजा को सुनायी।

जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने, उदयपुर की अद्वितीय सौदर्य के

लिए विख्यात राजकुमारी कृष्णाकुमारी पर, यह कहकर अपना हक जताया था कि राजकुमारी कृष्णाकुमारी की पहली सगाई उसके भाई के साथ हुई थी। अब यदि शादी के पूव उसका भाई स्वगवासी हो गया है तो राजकुमारी का रिश्ता उसके साथ किया जाना चाहिए। परन्तु उदयपुर के महाराजा को यह रिश्ता स्पष्टत नामजूर था। वह अपनी बेटी को जयपुर के युवा महाराजा जगतसिंह के साथ ही ब्याहना चाहते थे।

जोधपुर के महाराजा को जयपुर पर आक्रमण करने के लिए उनकी अपनी रियासत के ही एक प्रभावशाली सामन्त पाकरण के ठाकुर सवाईसिंह ने उकसाया था। पोकरण का ठाकुर अपनी बटी का ब्याह जयपुर के महाराजा जगतसिंह से 'डोला पद्धति से करना चाहता था, यह जाधपुर के महाराजा मानसिंह को स्वीकार नही था। जोधपुर के महाराजा का कहना था कि राठौरा की बेटी जयपुर तभी जा सकेगी जब जयपुर नरेश स्वय जोधपुर आकर उसे ब्याह कर ले जायेंगे। चूकि ऐसा नही हो रहा था, अत जोधपुर के महाराजा न सवाईसिंह को अपनी बेटी की शादी के लिए स्वीकृति नही दी थी। परन्तु पोकरण का ठाकुर सवाई सिंह अपनी बेटी को जयपुर-नरेश से ब्याहने के लिए अत्याधिक लालायित था। और जैसे भी हो वह अपनी बेटी को जयपुर के राजमहल मे प्रवेश कराकर अपना रिश्ता जयपुर से जोडना चाहता था। उसन जाधपुर के महाराजा के विरुद्ध षड्यन्त्र रचना शुरू कर दिया। उसने एक ओर तो धोकलसिंह को गुमराह कर जाधपुर का महाराजा बनन के लिए विद्रोह करने को उकसाया और दूसरी ओर महाराजा मानसिंह का मानसिक सतुलन बिगाडने के उद्देश्य से जोधपुर म यह प्रचार शुरू कर दिया कि जोधपुर महाराजा की पौरुषहीनता के कारण उदयपुर की राजकुमारी जाधपुर आन के बजाय जयपुर जा रही है।

पोकरण का ठाकुर अपनी चाल म सफल हो गया था। और जोधपुर का महाराजा अपने पौरुष का प्रदशन करन लिए सेना लेकर

जयपुर की ओर चल पड़ा था।

गुप्तचर विभाग के मुखिया की सूचनाएं गंभीर और चिंताजनक थीं। महाराजा ने हाथ से इशारा कर मुखिया को जाने के लिए कहा। मुखिया चला गया। महाराजा ने रसकपूर से चरणामृत लेते हुए कहा, "यह सही मौका है, चांदसिंह से बदला का ! मैं उसे जोधपुर की सेना से युद्ध के लिए भेज देता हूं।"

"और यदि चांदसिंह ने उल्टा आपसे ही बदला ले लिया तो ?"

"वह कैसे ?"

"जोधपुर के महाराजा से हाथ मिलाकर ! युद्ध के लिए किसी बागी सरदार को भेजना भयंकर भूल सिद्ध हो सकती है !"

"फिर किसे भेजा जाए ?" महाराजा सोचने लगे।

"किसे भेजा जाय ? क्या स्वयं आप युद्ध में नहीं जायेंगे ?"

"यह तुम कह रही हो प्रिये ? तुम मुझे युद्ध में भेजना चाहती हो ? क्या तुम मुझसे उकता गई हो ? मुझे जानबूझकर खतरे में धकेल रही हो ? क्या तुम एकान्त चाहती हो ?"

रसकपूर ने महाराजा का हाथ चूम लिया, "नहीं, राजन् ! मैं एक पल भी आपको देखे बिना जी पाऊंगी, यह संदिग्ध है। क्षणभर का भी आपका विछोह मुझे असीम वेदना देगा। पर राजन्, यह तो और भी अधिक कष्टदायक होगा जब हमारी सेना जोधपुर के हाथों परास्त हो जायेगी और मुझे प्रातःकाल किसी खिन्न चेहरे को चरणामृत देना पड़ेगा।'

"तुम ऐसा क्या सोचती हो, प्रिये ! हमारी सेना परास्त नहीं होगी। हमारे पास अनेक युद्ध प्रवीण योद्धा हैं ! तुम उनके पराक्रम से अभी परीचित नहीं हो। ये योद्धा हारकर नहीं बल्कि जीतकर ही लौटेंगे ! हमें ईश्वर ने जो सुख उल्लास के दिन दिखाये हैं, उसमें विघ्न नहीं पड़ेगा। तुम्हारी ये बांहें सदैव मेरे गले का हार बनकर रहेंगी।'

कहकर महाराजा ने रसकपूर को खींचकर आलिंगनबद्ध कर लिया।

सिर पर युद्ध के बादल मडरा रहे थ, और महाराजा अभी तक प्यार के नशे में डूबे हुए थे। रसकपूर को यह बिलकुल अच्छा नहीं लगा। उसने आतरिक तिरस्कार की भावना स प्रेरित होकर अपन को महाराजा के बाहुपाश से मुक्त कर लिया।

महाराजा जगतसिह अवाक हो रसकपूर को देखत रह।

राजन! यह समय प्रेमालाप का नहीं है। यह युद्ध का समय है! अब आप भूल जाइय कि कोई रसकपूर इस महल म रहती है। उठिय और जाकर युद्ध की तैयारिया कीजिय।

'यह कैसे सभव है प्रिय! मैं रसकपूर का विस्मरण कस कर सकता हू! मर लिए यह एकदम असभव है! रसकपूर मेर रोम राम म समा चुकी है। फिर यह युद्ध हो क्या रहा है? सिफ एक राजकुमारी के लिए ही न? मैं राजकुमारी कृष्णाकुमारी पर अपना हक छाड दूगा। युद्ध होगा ही नही! भला तुम्ह पाने के बाद अब इस महल म किसी दूसरी स्त्री के आन की जरूरत ही क्या रह गई है?"

'क्या कहा? तुम कृष्णाकुमारी को छाड दाग? अपने ब्याह के नित नय सपन देखन वाली उस बवसूर बाला का दिल तोड दाग? तुम उसे रला दाग? उस कोमलागी को एक प्रौढ दानव के लिए बलि चढा दोग? मुझे मालूम नही था तुम इतन निष्ठुर और स्वार्थी हो!"

"पर रसकपूर! यह सब तो मैं तुम्हारे लिए ही कर रहा हू! तुम्हार सान्निध्य से मैन यही तो सीखा है। इस दुनिया म प्रेम ही सब कुछ है! और युद्ध प्रेम का शत्रु है। मैं युद्ध नही करू गा!"

"युद्ध नही करोग? क्या तुम उस अनुपम सुन्दर राजकुमारी को खो दाग? क्या तुम अब सौदय के उपासक नही रहे? राजन! अब मुझे तुम पर विश्वास नही रहा! जो आज युद्ध स भय खाकर अपनी मगतर को छोड सकता है, वह एक दिन मुझे भी छाड द सकता है! असल म तुम युद्ध से भयग्रस्त हो! प्रेम तो एक बहाना मात्र है!'

"नही! बिल्कुल नही! मैं युद्ध से नहीं डरता हू। पर मैं इस युद्ध को

अनिवार्यता स्वीकार नही करता हू। यह युद्ध निरर्थक है ! मेरी पूर्णता कृष्णाकुमारी को पाने मे नही है "

"तब क्या रसकपूर को भोगने म है ?" रसकपूर महाराजा के दुर्बल हृदय से दुखी होकर आवश मे आ गयी, "राजन ! छोड दो मुझे ! मैं तो तुम्हारे शौर्य पर आसक्त होकर यहा आयी थी। मै कछवाहा राजपूत के पराक्रम पर मुग्ध हुई थी। राजमहल म सुख भोगने क लिए मैं नही आयी। मैं तो उस राजपूती पताका को और ऊचा फहराने आयी थी जिसे तुम्हारे पूर्वजो ने अपना खून बहाकर अभी तक फहराये रखा है। मुझे क्या मालूम था, इतना बडा महाराजा ! इतना विवेकी ! इतना कुशल राजनीतिज्ञ ! एक साधारण अकुलीन नारी को पाकर अपने कर्तव्यो को भूलकर तुच्छता को प्राप्त हो जायगा ! कहा गया वह तुम्हारे पूर्वजो की विरासत मे तुम्हे मिला हुआ शौर्य ? कहा है वह खानदानी राजपूती स्वाभिमान ? जोधपुर के महाराजा की दु चेष्टा की खबर सुनकर तुम्हारा खून क्या नही खौल उठा ? तुम्हारी भुजाए क्या नही फडक उठी ? अभी तक तुम्हारा हाथ म्यान पर क्यो नही चला गया ? मैं कहती हू, तुम्हारा शौर्य लुप्त हो चुका है ! तुम्हारी बाहो म अब तलवार उठाने का बल नही रहा ! तुम एक निर्बल पुरुष हो ! तुम कायर और पौरुषहीन हो ! तुम "

"रसकपूर !" महाराजा चीख उठे।

व तेजी से बाहर निकल आये।

"अरे ! कोई है ?" आवेश से महाराजा का सारा शरीर काप रहा था।

चार सेवक उपस्थित हो गये।

"प्रधानमत्री तथा सेनापति को तुरन्त बुलाओ, कहना हम उनसे विशेष मत्रणा करना चाहते है !"

महाराजा ने दीवाने खास म प्रधानमत्री, सेनापति तथा जयपुर रिया-

सत के समस्त सामन्त-सरदारों को भी बुला लिया और उन्हें सारी स्थिति से अवगत कराया। सभी ने जोधपुर के महाराजा के इस कृत्य की घोर भर्त्सना की। उपस्थित सरदारों ने, जिनमे दूनी का सामन्त चाँदसिह भी सम्मिलित था, महाराजा के प्रति पूर्ण वफादारी व्यक्त की और प्रण किया कि उदयपुर की राजकुमारी को जयपुर लाकर ही वे तलवारों को म्यान म डालेंगे।

सरदारों को अपने-अपने ठिकाने म जाकर युद्ध की तैयारी करने का आदेश देकर महाराजा ने उन्हें रवाना किया और स्वय प्रधानमन्त्री तथा सेना प्रमुखो के साथ विचार विमर्श मे जुट गये।

गुप्तचरो की सूचना थी कि जोधपुर के पास राठौरो की विशाल सेना है। सेना सुसगठित और महाराजा के प्रति पूर्ण आस्थावान है। सख्या की दृष्टि से भी जोधपुर की सेना जयपुर की सेना से कही अधिक है। जोधपुर की सेना म कई नामी सिद्धहस्त तोपची भी शामिल हैं।

गुप्तचरो की इन सूचनाओ से प्रधानमन्त्री को जयपुर की सेना की सफलता सदिग्ध नजर आने लगी।

सेना की सख्या किलो की सुरक्षा के लिए तैनात डीलो को उतार कर बढायी जा सकती थी। महाराजा के आधीन तत्तीस किले थे जिनम रणथम्भौर का प्रसिद्ध किला भी सम्मिलित था। किलो म लगभग छ हजार डील थे। महाराजा चार हजार डीलो (किले की सुरक्षा के लिए विशेषरूप से दक्ष सैनिक) को नीचे उतारना चाहते थे, पर रमकपूर ने उन्हें ऐसा न करने की सलाह दी। जयपुर का बिल्कुल असुरक्षित छोड दिया जाना खतरे से खाली न था। मौके का फायदा उठाकर पूर्व की तरफ से जयपुर पर आक्रमण होने का पूरा खतरा था। यह बात कालान्तर म सही सिद्ध हुई। जब जयपुर-जोधपुर युद्ध चल रहा था, कुचामन का ठाकुर जोधपुर की एक सेना-टुकडी के साथ जयपुर पर चढ आया था। उस वक्त रसकपूर द्वारा रोके गये डीलो ने ही बडी बहादुरी के साथ जयपुर की रक्षा की थी।

पिंडारी के नेतृत्व मे मराठो की सेना जयपुर की सना से आ मिली।

युद्ध की पूरी तैयारी के बाद युद्धघोष का बिगुल बजा दिया गया। आमेर महल म सिलादेवी की आराधना के बाद महाराजा जगतसिंह न स्वय घोड़े की राम थामी और मा देवी की 'जय जयकार' की गूज के साथ घोड़े को एड लगा दी। हिनहिनाकर घाडा हवा से बातें करन लगा।

विभिन्न शस्त्रो स लैस कछवाहा राजपूता की सेना राजमाग से जय पुर शहर को चीरती हुई सागानेरी द्वार से निकलकर जोधपुर के लिए रवाना हो गयी। घोडा की टापा से सारा शहर गूज उठा। धूल के गुबार से शहर के आकाश मे अधेरा छा गया।

माआ ने अपने बटो, बहिना ने अपन भाईया और वीरागनाओ ने अपने पतियो की जीत के लिए मगल-गीत गाय।

जयपुर की ओर चली जा रही जोधपुर की सना का जयपुर की सना ने गिंगोली मे रोक दिया। महाराजा जगतसिंह ने जोधपुर के महाराजा मानसिंह को ललकारा। भयकर युद्ध छिड गया। राठौरो और कछवाहा राजपूता की तलवारें एक दूसरे के खून की प्यासी हो उठी। दखते ही दखते लाशो का अम्बार लग गया। सारा मैदान खून से सन गया।

अमीरखा पिंडारी की अध्यक्षता मे मराठा-सेना का साथ जयपुर की सना के लिए वरदान साबित हुआ। राजकुमारी कृष्णाकुमारी को विजित करने आयी जोधपुर की सना बुरी तरह पराजित होकर भाग खडी हुई।

विजय की खुशी म जयपुर की सेना के सनिक झूम उठे।

युद्ध के लिए प्रस्थान करते समय रसकपूर का कहा हुआ वाक्य एका एक महाराजा जगतसिंह को स्मरण हो आया। रसकपूर ने कहा था—दुश्मन को कभी अधमरा मत छोड़ना। दुश्मन की शक्ति इस तरह क्षीण कर देना कि वह दुबारा युद्ध का नाम ही न ले। दुश्मन को अधमरा छाड दने की गलती स अनेक सल्तनता को बाद म भारी पछतावा उठाना पडा है। महाराजा ने जाधपुर की भागती सना का पीछा किया और जाकर

सीधा जोधपुर शहर को घेर लिया।

जयपुर की सेना द्वारा जोधपुर शहर का घेराव किये जाने से महाराजा मानसिंह घबरा उठा। उसने एक कुटिल चाल चली। तीस हजार रुपया से अमीरखा पिंडारी को खरीदकर जोधपुर के महाराजा ने उसे अपने पक्ष मे कर लिया। अमीरखा पिंडारी की सेना घेरा छोडकर विलग हो गयी।

अब जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने जयपुर की सेना का घेरा तोडने का दूसरा ही उपाय किया। उसने अपने कुछ विश्वस्त सामन्तो को अमीरखा पिंडारी की सेना के साथ जयपुर पर जाकर हमला करने के लिए भेज दिया। रास्ते म कुचामन का योद्धा सामन्त शिवनाथसिंह भी इनके साथ मिल गया।

रात के समय जयपुर राज्य की सीमा का इस सेना ने अतिक्रमण किया। परन्तु रसकपूर की राय पर किलो मे छोडे गये डीलो ने अदभुत शौर्य का प्रदर्शन करके इन्हें जयपुर शहर मे घुसने से रोके रखा।

रसकपूर ने जयपुर पर आक्रमण होने की सूचना तुरन्त महाराजा जगतसिंह को जोधपुर भिजवा दी। विवश होकर महाराजा को जोधपुर शहर का घेरा छोडकर जयपुर के लिए रवाना होना पड गया।

महाराजा जगतसिंह के जयपुर लौटने की खबर सुनते ही जोधपुर से आयी सेना की टुकडी भाग खडी हुई।

विजयी सेना का जयपुर लौटने पर हार्दिक अभिनन्दन हुआ। महलो के प्राचीर से मिगुन बजाये गये घर लौट आये योद्धाओ की माओ बहिनो ने आरती उतारी।

पूरे एक सप्ताह तक जीत की खुशी मनायी गयी। जश्न किये गये। महफिलो का आयोजन किया गया।

जीत की खुशी म रसकपूर फूली नही समा रही थी। वह राजराजेश्वर मन्दिर से बाहर आ गयी, जिसमे महाराजा जगतसिंह ने युद्ध पर जाने के बाद उनकी मगल कामना के लिये उसने स्थायी निवास बना लिया

था। महाराजा के लौट आने की खबर सुनते ही वह 'जय जयकार' करती हुए त्रिपोलिया पर आकर खडी हो गयी। महाराजा जगतसिंह ने घोडे से उतरकर सबसे पहले रसकपूर के पास जाकर उसका अभिवादन स्वीकार कर कुशल-क्षेम पूछा। नीली आखो से बहते दो आसुओ ने बडी बडी पलको के कोर गीले करते हुए विरह की वेदना व्यक्त की। महाराजा ने देखा, इन छ महीनो मे रसकपूर ने अपनी 'श्री' को काफी हद तक खो दिया है। वे उभरे हुए गाल जिनको उन्होंने जाते समय प्यार से स्पर्श किया था, भीतर धस गये हैं। वे उभरी हुई आखो की शखाकार बडी-बडी पुतलियां जिन्होंने उसे जयगढ किले से हसते हुए विदा किया था, धसकर निस्तेज पड चुकी हैं। गुलाब की पखुडियानुमा पतले पतले ओठ मुरझा कर हतप्रभ हो गये हैं, उन पर सिलवटें पड गयी हैं। रसकपूर के सौन्दर्य ह्रास को देखकर महाराजा अत्यन्त दुखी हो उठे। उनके मुह से बस इतना ही प्रस्फुटित हो सका—र स क पू र !

'चलिये राजन् ! महल मे चलिये।" अपने हाथ से फूलो से भरे थाल में से हसते हुए फूल बिखेरती हुई रसकपूर महाराजा के लिये मार्ग बनाने लगी।

महाराजा के महल में पहुचने पर अन्य रानियो ने भी उनका स्वागत किया। उन्हें युद्ध शस्त्रो को उतारा और उन्हे सहज वस्त्र धारण कराये।

जयराज ने महाराजा की थकावट उतारने के उद्देश्य से शाम का एक भव्य महफिल का आयोजन किया। परन्तु महाराजा ने महफिल स्थगित करवा दी। आज की शाम वे रसकपूर के साथ ही बिताना चाहते थे।

सध्या को आरती से निवृत्त हो रसकपूर सीधे प्रियतम निवास पहुची, जहा महाराजा जगतसिंह बडी बेसब्री से उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

रसकपूर ने देखा मदिरा की सुराही वैसी की वैसी ही ढकी पडी है। गिलास भी औंधे रखे हुए हैं। महाराज ने अभी तक मदिरा पान शुरू नहीं किया था।

"क्या बात है राजन् ! अभी तक आपने प्याला अपने ओठो स नही लगाया ?"

"यह प्याला तुम्हारे स्पश का इतजार कर रहा है, रस !"

रसकपूर मुस्करा पडी। उसने महाराजा के सिर पर फूलो की कुछ पखुडिया, जा वह मन्दिर से साथ ही ले आयी थी, फेंकी। फिर हाथ जोडकर उसने आखें बन्द की और भगवान स महाराजा तथा प्रजा की मगल कामना करने लगी। महाराजा ने बिस्तर पर आ पडी फूल की पखुडी को उठाकर अपने माथे से लगाया और अज्ञात शक्ति को श्रद्धा से नमन किया। महाराजा ने रसकपूर के जुडे हुए हाथो को पकडकर उसका ध्यान भग किया। रसकपूर मुस्करा कर महाराजा की बगल मे बठ गयी। उसने चादी की तश्तरी मे रखे चादी के प्याले को सीधा किया और उसमे सोने की सुराही से मदिरा उडेल दी। पहला प्याला उसन महाराजा जगतसिंह के ओठो से लगा दिया। महाराजा ने एक ही घूट मे गट गट कर प्याला खाली कर दिया। रसकपूर को यह उतावलापन अच्छा नही लगा। उसने दुबारा प्याला भरा और महाराजा के हाथ मे थमाते हुए बोली, "धीरे धीरे, राजन ! अभी तो रात शुरू भी नही हुई है।"

महाराजा ने रसकपूर की ठोडी को उठाते हुए कहा, तुम्हारी पलको मे काजल लगते ही रात हो जाती है ! फिर मदिरा का सम्ब ध रात से नही, व्यक्ति के जजबाता से होता है। तुम्हारे सा निध्य मात्र से मेरे जजबात उछाला खा जाते हैं।" थोडा रुक कर महाराजा बोले 'यह मदिरा तो मैं उस मदिरा को पीने के लिए शक्ति सचय हेतु पीता हू, जिसे अभी मुझे पीना है !'

रसकपूर कुछ विस्मय मे आ गयी, "ऐसी कौन सी मदिरा है जो इस मदिरा के बाद पीनी है राजन् ?'

"वह जो तुम अपनी आखो से पिलाती हो !"

महाराजा रसकपूर की आखा म झाके जा रहे थे, रसकपूर ने शर्मात

हुए पलकें गिरा दी। वह मद मद मुस्कराती हुई बोली, 'क्या सचमुच मेरी आखें इतनी नशीली हैं ?"

महाराजा ने इसका कोई उत्तर नही दिया। उनके ओठ रसकपूर की पलकों के साथ जा लगे।

महाराजा जगतसिंह को सुरापन करते हुए दो घण्टा स भी अधिक हो चुके थे। रसकपूर ने महाराजा के ओठो पर अपना हाथ रख दिया और बोली, "अब बस कीजिये, राजन ! आज आपने बहुत पी ली है ! '

महाराजा ने रसकपूर की शखाकार बडी-बडी नीली आखो म झाक कर देखा, सुरापन से आखें लाल अगूरी हो रही थी । उन्हे वहा एक बहुत बडे कलाकार का छलक रहा अभिमान दिखाई दिया। उसके गुलाब की पखुडियानुमा पतले ओठ कुछ शुष्क हो उठे थे जो उसके शरीर की ऊष्मा को दर्शा रह थे। नशीली आखें लाल अगूरी होकर और भी फैल गयी थी। ऊष्मित वक्ष तजी से नीचे-ऊपर उठ गिर रह थ। हाथ की उगलिया सितार के तार की तरह काप रही थी। आचल कब का वक्षो से ढल कर महाराजा की गोद मे गिर गया था। महाराजा ने गोद मे पडी चुनरी को उठाकर रसकपूर के ओठ के नीचे ठोडी पर टिकी हुई दो मदिरा-बूदो को पोछ लिया। रसकपूर समझ गयी, अब महाराजा की बाह उसकी ओर बढेंगी। वह शमाकर अपने मे सिमट गयी। कुछ क्षण और व्यतीत हो गये। महाराजा के हाथ रसकपूर की ओर नहीं बढ। रसकपूर ने धीरे से पलकें उठाकर महाराजा की ओर देखा। व तिपाई पर पडे घुघरुओ की ओर देख रहे थे।

'पूरे छ महीन हो गय हैं इन घुघरुओ को बजते हुए देखे रस ! आज हम अपना नृत्य नही दिखाओगी ?"

'अवश्य राजन !'

रसकपूर उठकर तिपाई की तरफ बढी। दो कदम चलकर ही वह लडखडा कर मुह के बल गिर पडी। रसकपूर खिलखिला कर हस पडी।

महाराजा उठकर लडखडाते कदमो स रसकपूर के पास पहुचे और

उसे उठाकर पास पडी तिपाई पर बैठा दिया । अगले ही क्षण रसकपूर अपने एक पाव म स्वय घुघरू बाध रही थी और दूसरे पाव म महाराजा घुघरू बाध रहे थे।

रसकपूर पूरी रात नाची। वह तब तक नाचती रही जब तक महाराजा की नजरें थक न गयी। महाराजा की नजरें थक गयी पर रसकपूर के पैर नही थके।

'बस! अब और नृत्य नही!" कहकर महाराजा ने रसकपूर को रोक दिया।

वह पलग पर आकर बैठ गयी।

महाराजा न सुराही मे बची खुची शराब दो प्याला म डाली। एक प्याला रसकपूर के ओठो से लगाते हुए कहा, बस! आज की रात का यह आखिरी जाम है।'

अपना प्याला उठाकर महाराजा ने रसकपूर स पूछा, रसकपूर!'

जी, राजन!

"यह ससार यह प्रकृति, यह सष्टि कितनी सुदर है?'

'बहुत सुदर है, राजन!"

'ईश्वर ने हमार सुख के लिए कितन साधन बनाय हैं!'

बहुत बनाये हैं, राजन्!'

पर कभी कभी मनुष्य इन साधना को विकृत कर लेता है!

'नादानी से मनुष्य ऐसा करता है।

'परतु ऐसा क्यो करता है वह, रसकपूर?

'विवेकशून्य स्थिति मे या परिस्थितिया के वशीभूत हो जान पर ही मनुष्य ऐसा करता है।

भगवान ने जिस वस्तु को प्रेम करन क लिए बनाया है मनुष्य कभी कभी उससे घृणा करने लगता है।'

"अक्सर ऐसा होता है।"

पर मैं नफरत मे विश्वास नही करता।

"यह तो अच्छी बात है, राजन् !"

"प्रेम करने में कितना सुख मिलता है !"

"बहुत सुख मिलता है।"

"अलौकिक सुख है प्रेम में, है न !"

"हां !"

"क्या प्रेम स्थायी होता है ?"

'हां, राजन् ! प्रेम स्थायी होता है।"

"हम दोनों भी तो एक-दूसरे को प्यार करते हैं ?"

"करते हैं, राजन् !"

"क्या हमारा प्रेम भी स्थायी है ?"

' '

रसकपूर ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह मौन रही।

महाराजा ने पुनः पूछा, "हमारा प्रेम स्थायी है न, रस ?"

"स्थायी ? " रसकपूर बुदबुदाकर बोली, "प्रेम तो अमर होता है राजन् !"

"स्थायी भी होता है।" महाराजा ने खुद ही अपने प्रश्न का उत्तर दिया "तुम जीवन-पर्यन्त प्रेम निभाओगी न ?"

रसकपूर मौन थी।

"निभाओगी न रस ?' महाराजा ने रसकपूर को झकझोरकर पूछा, "नहीं निभाओगी क्या ?"

"मैं मैं तो जन्म जन्मान्तर के लिए आपकी हूं, राजन् !"

महाराजा को राहत मिली। उन्होंने एक ही घूंट में प्याले की बाकी मदिरा को कण्ठ से नीचे उतारा और पूछा, "अच्छा, यह बताओ, प्रेम की अंतिम परिणति क्या होती है ?"

'यह कोई नहीं जानता, राजन् !'

महाराजा के चेहरे पर कुछ खिंचाव सा आ गया। वे प्रेम की अंतिम परिणति के सम्बन्ध में अपने विचार स्थिर करने लगे।

जोधपुर पर विजय की खुशी स्थायी नही रह सकी।

उदयपुर से समाचार आया, अनुपम सुदरी राजकुमारी कृष्णाकुमारी न विष खाकर आत्महत्या कर ली है। कृष्णाकुमारी ने अपन उस सौदय को अभिशाप समझा, जिसकी वजह से इतनी खून खराबी हो गयी थी।

महाराजा इस समाचार स बहुत दु खी हुए। वे यह सोचकर दु खी थे कि जिसे पान के लिए इतना बडा युद्ध लडा गया, अपने अनेक साथिया को उन्होंने खोया, वह इतनी जल्दी ही ससार को छोडकर चली गयी।

महाराजा इस सदमे को बर्दाश्त नही कर सके। उन्हे ज्वर रहने लगा। कुछ ही दिनो मे वे गभीर रूप म अस्वस्थ हो गये।

राजवैद्य ने महाराजा का उपचार शुरू किया। कई तरह की औषधिया महाराजा को दी गयी, पर बेअसर सिद्ध हुइ। महाराजा का ज्वर उतर ही नही रहा था। वे पलग पर लेटे लेट बुदबुदात रहते— किसके लिए इतना बडा युद्ध लडा मैंने ? किसके लिए मैंने इतने योद्धाओ का खून बहाया ? आह कृष्णा ! तुम कहा चली गयी ?

महाराजा के चित्त को शाति देने के उद्देश्य से रसकपूर सुबह शाम सितार लेकर भजन गाती रहती।

महाराजा की बीमारी के लम्बी खिच जाने स व्यवस्थित राजकाज अब पुन अव्यवस्थित हो गया। उनकी लम्बी बीमारी का फायदा उठाकर कुछ सामन्तो न मनमानी करनी शुरू कर दी। दूनी के सामत चादसिंह ने भी रसकपूर के खिलाफ पुन जिहाद छेड दिया। प्रधानमत्री सारी स्थिति पर नियत्रण पाने मे स्वय को असमथ पा रह थे।

राजस्व म तेजी से गिरावट आने लगी। राजकोष पर भारी दबाव पडने लगा।

उधर मराठो न भी करवट बदल ली थी। जयपुर के साथ की गयी सधि का उन्होने तोड दिया था। अमीरखा पिंडारी ने भी आखें तरेरनी शुरू कर दी। इस प्रकार आतरिक दशा बिगडने के साथ साथ बाह्य खतरा भी

उत्पन्न हो गया था।

प्रधानमत्री न सारी स्थिति पर विचार किय जाने हतु महाराजा जगतसिंह से दरबार का आयोजन करने का अनुरोध किया। अस्वस्थता के बावजूद महाराजा ने इस बात को मान लिया और मुकुटमहल के अन्दर ही सभागार म दरबार लगाया गया। रियासत के सभी प्रमुख सामन्तो को इसम भाग लेने के लिए आमत्रित किया गया था।

सभा म प्रधानमत्री ने सारी स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होंने उपस्थित सरदारों को बताया कि हालाकि जोधपुर पर ऐतिहासिक विजयी पायी गयी है परन्तु यह विजय हम बहुत महगी पडी है। इस युद्ध मे जहा अनेक योद्धाओं को खोना पडा है, वहा काफी बडी धनराशि से भी हाथ धोना पडा है। छह महीना की इस लम्बी लडाई म काफी धन व्यय हुआ है। इधर प्राकृतिक प्रकोप भी हुआ है। अच्छी फसल न होने स राजस्व मे भारी गिरावट आयी है। परिणामस्वरूप राजकोष पर इस समय भारी दबाव पड रहा है। इन आतरिक हालाता के अलावा बाहरी हालात भी अच्छे नजर नही आ रह हैं। मराठो ने सधि तोड दी है और अमीरखा पिंडारी भी अब विश्वसनीय नही रहा है। मैं समस्त प्रमुखो से अनुरोध करता हू कि इन सारी परिस्थितियो पर, महाराजा के गभीर रूप से अस्वस्थ होने की अवस्था मे, गभीरतापूवक विचार करें।

प्रधानमत्री के वक्तव्य के बाद सभी सामन्त विचार विमश मे लीन हो गय।

सामन्त आपस मे मत्रणा करने मे लगे ही हुए थ कि डिग्गी के ठाकुर मेघसिंह ने खडे होकर सबका ध्यान आकर्षित किया।

महाराजा, रसकपूर और प्रधानमत्री मेघसिंह की ओर उन्मुख हुए।

मेघसिंह ने सभा को सम्बोधित करते हुए अपने सुझाव रखे "अन-दाता! जो स्थिति बयान की गई है वह वस्तुत चितनीय है। हमे समस्या स निपटने के लिए दुहरी नीति अपनानी चाहिए। एक ता कुछ तात्कालिक कदम उठाय जाने चाहिए, जिनका मैं अभी विस्तार से वणन करता हू।

दूसरा हमें उस जमींदोज खज़ाने को ढूंढ निकालना चाहिए जिसे हमारे पूर्वजों ने ऐसे ही आड़े वक्त में काम आने के लिए गाड़ा था।"

सभी सामन्त उत्सुकता के साथ डिग्गी के ठाकुर की बात सुन रहे थे।

"राजराजेश्वर! चूंकि खजाना ढूंढने में समय लग सकता है, अतः हमें कुछ तात्कालिक कदम उठाने चाहिए। राजकोष के लिए प्रत्येक सामन्त से कुछ अंशदान लिया जाना चाहिए तथा सेना को पुनः शक्तिशाली बनाने के लिये हर सामन्त को अपने यहां प्रति एक हजार की आबादी पर पचास सैनिक तथा दस घुड़सवार तैयार कर उनका खर्च वहन करना चाहिए।

महाराजा, रसकपूर और प्रधानमंत्री को यह सुझाव मान्य था। परन्तु अन्य सामान्त मेघसिंह के इस सुझाव पर आपस में मंत्रणा करने लगे।

एक सामन्त ने खड़े होकर पुनः सभा का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। उसने कहा "अन्नदाता! यदि आप क्षमा करें तो मैं एक सुझाव रखूं! हमें पता चला है कि कलकत्ते में गोरों ने 'ईस्ट इंडिया कम्पनी' की स्थापना की है। इस कम्पनी के पास कुशल रणनीतिज्ञ तो हैं ही साथ ही साथ आधुनिक शस्त्र अस्त्र भी हैं। हमें इस कम्पनी से संधि कर लेनी चाहिए। इससे मराठों के दबाव को रोका जा सकता है।"

इसके पूर्व कि महाराजा इस सुझाव पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते रसकपूर बोल पड़ी "कदापि नहीं! क्या हमारा शौर्य समाप्त हो चुका है? क्या राजपूती खून ठण्डा पड़ चुका है जो हमें अब मलेच्छ रक्त की शरण लेनी होगी?"

सभा में मौन छा गया।

अंत में डिग्गी के ठाकुर द्वारा दिये गये सुझावों पर अमल करने का निर्णय लेकर सभा विसर्जित हो गयी।

सभागार से दूनी का सामन्त चांदसिंह सिवाड़ के ठाकुर के साथ महाराजा से मिलने उनके निजी कक्ष में गया। उस समय महाराजा

रसकपूर के साथ सभा मे हुए फसला पर वार्ता कर रहे थे।

दोनो सामन्तो के आने की सूचना चोबदार ने महाराजा का दी। महाराजा को सभा की समाप्ति के तत्काल बाद चादसिंह का आना कुछ आश्चयजनक लगा। उन्होंने चोबदार से उन्हें अन्दर भेजने को कहा।

सामन्त चादसिंह ने आकर महाराजा को अभिवादन किया फिर एक तीखी नजर रसकपूर पर फेंक कर महाराजा से बोला, "यदि अन्नदाता एकात बख्शें तो मैं कुछ अज करू!"

महाराजा जगतसिंह को यह बुरा तो लगा, परन्तु फिर उन्होंने चले जाने के अभिप्राय से रसकपूर की ओर देखा। रसकपूर चुपचाप उठकर पिछले कक्ष मे चली गयी।

"अन्नदाता! अपराध क्षमा हो। आज सभा मे राज्य की स्थिति का जो चित्र खीचा गया और जो सुझाव दिए गये, सब समयोचित हैं। हम इन सुझावो पर अमल करेंगे। खजाने को ढूढने के लिए हम विशेष रूप से प्रयत्न करेंगे। बाहरी सभावित आक्रमणा के मुकाबले के लिए हम अपनी सना का पुनगठन करेंगे। हम चाहेगे कि यह कठिन काय आप हम पर ही छोड दें।"

'यानी कि ?"

"मतलब यह कि आप प्रधान सेनापति को आदेश दे दें कि वह मेरे कहे अनुसार सेना को सगठित करें। यदि सेनापति मेरे आदेशानुसार काय करत हैं तो हम अल्पावधि मे ही सना को सुसज्जित कर लेंगे।'

महाराजा को सामन्त चादसिंह का यह सुझाव बुरा नही लगा। उन्होने इसे तत्काल मान लिया।

"और जमीदोज खजाने को ढूढने का काम किसको सौंपा जाय?"

'यह भी अन्नदाता आप मुझ ही पर छोड दीजिये! मैं चार एसे विश्वसनीय सरदारा को इस काय के लिए नियुक्त करूगा जिनके पूवजो का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मे खजाना जमीदोज किये जाते समय सम्बन्ध रहा है।"

महाराजा को यह सुझाव भी बहुत उपयुक्त लगा। उन्होंने सेना के पुनर्गठन और खजाने की खोज, दोना कार्यों का दायित्व सामन्त चादसिंह को सौंप दिया।

सामन्त चादसिंह ने बीजक की खोज पुन पोथीखाना म शुरू करायी। स्वर्गीय महाराजा सवाई जयसिंह के निजी कक्ष के कुछ गुप्तस्थानो को भी टटोला गया।

बीजक की खोज के साथ-साथ सवाई जयसिंह के समय जमीदोज किय गय खजाने से सम्बन्धित सामन्तो के घरो मे भी किसी सूत्र या सकेत पा जाने की दृष्टि से खोज की गयी।

खजाने के ढूढ निकालने मे अथक परिश्रम के बावजूद चादसिंह को कोई उल्लेखनीय सफलता नही मिली।

खजाना न मिलने से चादसिंह और महाराजा जगतसिंह दोनो को ही भारी निराशा हुई। जमीदोज खजाने से जयपुर राज्य को शक्तिशाली बनाकर रसकपूर के साथ सुख चैन से दिन बिताने के महाराजा जगत सिंह के मसूबे ध्वस्त हो गय। अठठाईस वर्षीय महत्त्वाकाक्षी महाराजा जगतसिंह ने चादसिंह के असफल हो जाने के बावजूद प्रधानमत्री को जमीदोज खजाने को निरन्तर ढूढते रहने का आदेश दिया।

खजाना ढूढे जाने म महाराजा, प्रधानमत्री और प्रमुख सामन्त इतन व्यस्त हो गय थे कि राजकाज के सचालन की किसी को सुध-बुध ही नही रही। इसका फायदा उठाकर कुछ मुखिया मनमानी करने लगे और अधिकारी स्वच्छद होकर आचरण करन लगे। सूखा पड जाने स जनता वस ही तकलीफ म थी, तिस पर अधिकारियो के अत्याचार, लोगो की अनेक शिकायतें जमा होन लगी।

राज्य को आर्थिक रूप से सुदृढ करने की आखिरी किरण जमीदोज खजाने के न मिल पाने से चादसिंह पुन उखड गया और उसन रसकपूर के खिलाफ दुबारा जिहाद छेड दिया। वह रसकपूर को निहायत अपशकुनी नारी बताकर जनता मे उसके विरुद्ध घृणा फलाने लगा।

चादसिंह और उसके समर्थकों ने महाराजा को कहला भेजा कि जब तक रसकपूर राजमहल में रहेगी, वे महाराजा से कोई सहयोग नहीं करेंगे।

इस चेतावनी से महाराजा जगतसिंह बहुत क्षुब्ध हो उठे। विपद-काल में असहयोग की बात उन्हें काफी कष्टदायक लगी। उधर गुप्तचरों की सूचना थी कि मराठे जयपुर पर आक्रमण करने की जोरदार तैयारियां कर रहे हैं। इस दुष्काल में चांदसिंह की जिद महाराजा को सहन नहीं हुई। उन्होंने रसकपूर के मामले का अन्तिम रूप में निपटारा करने की एक योजना बनायी और इसके लिए राजसभा आमन्त्रित की।

प्रधानमंत्री ने अपने विशिष्ट अनुयायियों द्वारा पूरे शहर में जोरदार चर्चा फैला दी कि महाराजा सभा में एक विशेष घोषणा करने वाले हैं। सारे शहर में और खास तौर से इस घोषणा के प्रति भारी उत्सुकता जाग्रत हो गयी।

निश्चित दिवस पर सभा का आयोजन हुआ।

सभागार में सामन्त, सरदार, जागीरदार, प्रधानमंत्री, मुखिया, अधिकारी तथा शहर के प्रमुख आमन्त्रित विशिष्टजन समय से पूर्व ही आ पहुंचे थे। आज की सभा में गुप्तचरों के मुखिया और सेना के प्रधान को भी आमन्त्रित किया गया था। ये दोनों एकान्त में अपने स्थान पर बैठे गंभीर मन्त्रणा कर रहे थे, जबकि अन्य लोग संभावित घोषणा का अनुमान लगा रहे थे।

चोबदार की आवाज गूंजी और सभा में उपस्थित जन शांत हो गये।

'बाअदब, बमुलाहिजा होशियार! राजराजेन्द्र महाराजाधिराज सवाई जगतसिंहजी बहादुर पधार रहे हैं"

सभा में महाराजा रसकपूर के साथ पधारे।

महाराजा के स्थान ग्रहण कर लेने के बाद सामन्त बैठने लगे। कुछ सामन्त तो तब तक न बैठे, जब तक महाराजा के बाद रसकपूर ने भी अपना स्थान ग्रहण नहीं कर लिया। महाराजा ने ऐसे सामन्तों का

मुस्कराकर प्रोत्साहित किया। चांदसिंह की तीखी नजरें उन सामन्तों की ओर मुड़ी।

परम्परानुसार सभा में पहले राजकाज निपटाया गया। फिर कुछ फरियादी मामले उठाये गये।

अन्त में महाराजा ने सभा को उद्बोधन किया, 'सभासदो! कुछ दिनों से मेरे पास शिकायतें आ रही हैं कि राज्य के कुछ अधिकारी स्वच्छन्द आचरण कर रहे हैं। मनमानी हो रही है। प्राकृतिक प्रकोप से दुखी जनता को इससे काफी कष्ट हो रहा है। उधर बाहरी खतरा भी बढ़ गया है। मराठों और अमीरखाँ ने फिर से उत्पात मचाना शुरू कर दिया है। बड़े पैमाने पर किसी बाह्य आक्रमण के हो जाने का खतरा दिखाई दे रहा है। इसलिए अन्दरूनी और बाहरी खतरों से निपटने के लिये आज हममें एकता का होना अत्यन्त आवश्यक है। मैं देख रहा हूं, रसकपूर को लेकर सामन्त दो खेमों में बंट गये हैं। यह विभाजन राज्य के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहा है। मैं भी इस विग्रह से अब बहुत तंग आ चुका हूं। अतः मैं आज रसकपूर के मामले को अन्तिम रूप से निपटा देना चाहता हूं।'

सामन्तों की उत्सुकता चरम सीमा पर पहुंच गयी। दूनी के सामन्त चांदसिंह ने अपनी मूंछों पर हाथ फेरा और मन्द मन्द मुस्कराने लगा। चांदसिंह के समर्थक सामन्त, चांदसिंह को मुस्कराता हुआ देखकर संभावित विजय से प्रसन्न होकर आपस में एक दूसरे से आंखों ही आंखों में बतियाने लगे।

महाराजा बोलते गये, 'रसकपूर इस राजमहल में रह रही है। उसे रहते हुए भी काफी समय हो गया है। इस प्रकार से वह राजमहल की व्यवस्था का अंग ही बन चुकी है। राजकाज में भी उसकी बातें अनेक बार अत्यन्त उपयोगी समझी गयी हैं। युद्धकाल में तो मेरी अनुपस्थिति में रसकपूर ने ही जयपुर को सुरक्षित रखा था। उसने अनेक बार अपने विलक्षण विवेक का परिचय दिया है। और अब रसकपूर मेरे इतना

निकट आ चुकी है कि उसके बिना मैं स्वय अस्तित्वहीन हो जाता हू। अत राजमहल मे वह साधिकार रहने की अधिकारिणी हो चुकी है। पर चूकि वह राजवश से सम्बधित नही है, इसलिए कुछ सामन्तो को उसके आगे सिर झुकाने मे या अपनी बात कहने मे झिझक होती है। मैंने बहुत सोच विचारकर इसका हल निकाल लिया है। रसकपूर को राजमहल मे स्थापित करने के लिए जरूरी है कि उस राजवश से जोडा जाय। अत मैं घोषणा करता हू कि आज से जयपुर के आधे राज्य की मालिक रसकपूर होगी। मैं आधा जयपुर रसकपूर को समर्पित करता हू।

महाराजा जगतसिंह की इस घोषणा से सभा मे सन्नाटा छा गया। अब तक मुस्करा रहे चादसिंह और उसके समथक सामन्तो के चेहरो पर हवाइया उडने लगी। एक दूसरे की आखो मे सकेत कर रहे सामन्त अब एक दूसरे को आखें फाडकर देखने लगे।

प्रधानमत्री ने औपचारिकता निभायी। उन्होने आधा राज्य रसकपूर के नाम किये जाने का लिखित घोषणा पत्र पढकर सभा मे सुनाया और सब की उपस्थिति मे उस फरमान पर महाराजा से हस्ताक्षर भी करा लिये।

एक निस्तब्धता के साथ सभा विसर्जित हो गयी।

रसकपूर को महाराजा जगतसिंह द्वारा आधा राज्य सौंप दिये जाने के बाद रसकपूर बाकायदा पटरानी बनकर राज्य करने लगी। उसके शासन मे अधिकाश उन्ही सामन्तो के ठिकाने थे जो चादसिंह के नेतत्व में उसका विरोध करते रहे थे। अब तक रसकपूर के अस्तित्व को नकार कर चल रहे इन सामन्तो को मानसिक रूप से लकवा सा मार गया। अब तो उनकी मालकिन स्वामिनी, भाग्यनिमात्री रसकपूर ही थी। वह अब किसी की जागीर छीन सकती थी और चाहे जिसे जागीर सौंप सकती थी।

किन्तु रसकपूर ने ऐसा कोई भडकाने वाला काम नही किया। उसने न किसी विरोधी सामन्त की जागीर छीनी और न ही किसी अपात्र व्यक्ति को जागीर दी। बल्कि उसने चादसिंह का हृदय जीतने की दृष्टि से उस

अपने राज्य का प्रमुख बनाना चाहा, पर चांदसिंह ने अस्वीकार कर दिया।

पासा उल्टा पड गया था। जहा महाराजा जगतसिंह रसकपूर को आधे जयपुर की स्वामिनी बनाकर सुस्थापित करना चाहते थे वहा अब तक रसकपूर को राजमहल मे बर्दाश्त कर रहे व सामन्त भी उखड गये। उन्होंने भी सामन्त चांदसिंह के स्वर मे स्वर मिला दिया। जनता में भी इस घोषणा का स्वागत नही हुआ। जयपुर शहर म जोरो स कानाफूसी शुरू हो गयी। मुखिया और अधिकारीगण तो बाकायदा प्रधानमंत्री को पदच्युत करने के प्रयास मे जुट गये। इनका मानना था कि रसकपूर को इस हद तक पहुचाने मे प्रधानमंत्री द्वारा महाराजा को दिया गया सहयोग ही था।

मराठो के पास जयपुर की बिगड रही आन्तरिक और आर्थिक दशा की सूचनाए बराबर पहुच रही थी। मराठो ने एक विशाल सेना तयार की और जयपुर पर आक्रमण करने के लिए कूच कर दिया। राजनीति मे मौके का फायदा न उठाने वाले को मूर्ख ही कहा जाता है।

गुप्तचरो ने कोटा के पास मराठो की भारी सेना के जमाव की सूचना महाराजा को दी। स्थिति ने बहुत भयकर रूप ले लिया था। महाराजा ने तुरन्त युद्ध की तैयारिया शुरू कर दी। उन्होंने सहयोग के लिए दूनी के सामन्त चांदसिंह को भी बुलाया परन्तु वह अस्वस्थ होने का बहाना करके महाराजा द्वारा बुलायी गयी आपातकालीन बठक म भाग लेने नही आया। चांदसिंह के नाम जयपुर की सुरक्षा का आदेश छोडकर महाराजा जगतसिंह सेना लेकर स्वय निकल पड।

महाराजा जगतसिंह मराठो की सेना की शक्ति एव युद्धकौशल से परिचित थे, इसलिए अपनी सहायतार्थ उन्होने मेवाड की सेना भी बुला ली।

कोटा के पास जयपुर-मेवाड-कोटा बूदी की सम्मिलित सेना और मराठो की सेना म घमासान युद्ध छिड गया। महाराजा जगतसिंह के अदभुत शौर्य प्रदर्शन के बावजूद चार राज्यो की सयुक्त सेना भी मराठो

के युद्ध चातुय स हार गयी।

महाराजा जगतसिंह न मराठा को युद्ध का मनचाहा खच और भारी जुर्माना देना स्वीकार किया और अपनी पराजय मान ली।

जयपुर मे पराजय की खबर पहुचते ही मातम छा गया।

चादसिंह की अध्यक्षता म शीष साम तो की एक गुप्त बठक हुई। बैठक म जयपुर की अधोगति का कारण रसकपूर को घोषित किया गया, और इस काटे का सदव के लिए समाप्त कर दन क लिए चान्सिंह को कहा गया।

रात मे तीसरे पहर चान्सिंह के नततव मे कुछ साम त सनिक लेकर मुकुटमहल पहुचे, जहा रसकपूर महाराजा जगतसिंह क वियोग म पलग पर पडी तडप रही थी। उसे अभी तक नीद नही आयी थी। वह हर आहट पर महाराजा के आने की कल्पना करती। बार-बार परिचारिकाओ स महाराजा के लौट आने का सदेश पूछ रही रसकपूर साम तो के इस षड्यन्त्र से एकदम बेखबर थी।

सामन्तो ने आकर मुकुटमहल को घेर लिया और दूनी का साम त अपन साथियो के साथ महल के अ दर प्रविष्ट हुआ।

"कौन ? ' रसकपूर न वही स ऊची आवाज मे पूछा।

"मैं हू—चादसिंह !"

"आप ? ' इतनी रात म ? आपकी यहा आन की हिम्मत कैसे हुई ?"

' मैं आपको गिरफ्तार करने आया हू !'

' खामोश ! अधम !" रसकपूर न जोर स आवाज लगायी, 'अरे, कोई है ? इसे पकडकर ले जाओ और सीखचो मे बद कर दो !'

रसकपूर के आदेश का पालन नही हुआ। द्वार पर खडे प्रहरी अदर नही आय।

अरे, तुम सुन क्या नही रहे हो ? मैं कह रही हूँ, चादसिंह को गिरफ्तार कर लो !"

प्रहरियो से कोई उत्तर नही मिला रसकपूर को। वह तिलमिला कर रह गयी।

एक बार पुन उसने चिल्लाकर सुरक्षा प्रहरियो को पुकारा, पर वे अदर नही आये। रसकपूर चादसिह का षडयत्र समझ गयी। वह निढाल होकर अपने पलग पर गिर पडी।

एक सामत ने मशाल जलाकर कमरे मे रोशनी की। चादसिह ने रसकपूर की बाह पकडी और उसे मुकुटमहल से बाहर ले आया।

रसकपूर को सम्पूर्ण वैभव के साथ नाहरगढ किले मे जहा सिर्फ बदी राजाओ को कैद रखा जाता था, कैद कर दिया गया।

रसकपूर को गिरफ्तार कर लेने के बाद सामतो ने राजमहल पर भी एक प्रकार से कब्जा कर लिया। प्रधानमत्री को एकदम पगु बना दिया और उनके आदेशो की पालना उन्होने रुकवा दी। प्रधानमत्री मजबूर हो चुपचाप अपने निवास पर आराम करने लगे। सामतो ने महाराजा द्वारा रसकपूर के नाम किये गये आधे राज्य के फरमान को फाड डाला और उसके नाम का चल रहा सिक्का रुकवा दिया।

पराजित महाराजा जब जयपुर लौटे, तो उन्हे यह मर्मभेदी समाचार मिला। सामतो द्वारा की गयी कार्यवाही को जहर के घूट की तरह पी लेने के अलावा उनके पास कोई चारा नही था। वे इस समय एकदम अवश और शक्तिहीन हो चुके थे। युद्ध की पराजय से जहा उन्होने अपनी प्रतिष्ठा खो दी थी वहा आर्थिक दृष्टि से जर्जर राज्य अब विकट अर्थाभाव के सकटो से जूझ रहा था। युद्ध का खर्चा और जुर्माना भी तो समय पर मराठा को पहुचाना था। इस सबके लिए सामतो का सहयोग आवश्यक था। विवश होकर सारी बातें सुनकर भी महाराजा को चुप रह जाना पडा।

चाहते हुए भी महाराजा ने रसकपूर को नाहरगढ किले की कैद से मुक्त नही कराया। सामत चादसिह ने महाराजा से साफ साफ कह दिया था कि यदि रसकपूर को वापस राजमहल मे लाया गया तो महाराजा को

इसके लिए गभीर परिणाम भुगतने होंगे। महाराजा जगतसिंह गभीर परिणाम का मतलब समझते थे अत रसकपूर के मामल म उन्होंन चुप्पी साध लेना ही उचित समझा।

रसकपूर की मुक्ति के लिए महाराजा द्वारा जोर न दिये जाने से सामन्त उल्टा खुश हुए और व अर्थ जुटाने मे लग गये, जिसस मराठा को समय पर भुगतान दिया जा सके।

□

रसकपूर के अभाव म तडप रह महाराजा ने एक दिन अपने मन की तसल्ली के लिए रसकपूर का हाल पुछवाना चाहा। उन्होने इसक लिए जयराज को बुलवाया। जयराज विश्वसनीय व्यक्ति तो था ही, साथ ही उसके सभी सामन्तो और प्रतिष्ठित व्यक्तियो से सम्बन्ध अच्छे थे। नाहरगढ़ किले म जाकर रसकपूर से मिलने म उसके लिए किसी विशेष कठिनाई की सम्भावना नही थी।

महाराजा की बात समझकर जयराज अपनी सितार लकर नाहरगढ किले मे पहुचा। वह स्वय भी रसकपूर की हालतजानन के बारे मे बहुत उत्सुक था। महाराजा द्वारा यह काय सौंप जाने से वह उल्टा प्रसन्न ही हुआ था।

एक विभाग का मुखिया होने के नाते उसका स्तर मत्रीपद के समकक्ष था। इसलिए प्रारम्भिक द्वारो के प्रहरियो ने जयराज को नही टोका। परन्तु जहा रसकपूर कैद थी वहा महल के द्वारपाल न जयराज को अदर प्रवेश करने से रोक दिया।

जयराज द्वारपाल से बहस करने लगा। वह उसे समझाने लगा कि एक ऐसे राग को जिसे स्वय रसकपूर ने ईजाद किया है उसके लिए सीख लेना बहुत जरूरी है, अन्यथा वह राग भी सदा के लिए रसकपूर के साथ ही चला जायेगा। परन्तु द्वारपाल टस-से मस नही हुआ।

हल्ला गुल्ला सुनकर वहा चादसिंह आ गया। उसने जयराज की बात सुनकर, उसे रसकपूर के पास जाने की इजाजत दे दी।

जयराज को देखते ही रसकपूर खुशी से उछल पडी। उसने प्रश्नो की झडी लगा दी, "महाराजा अभी लौटे नही क्या ! व कब लौट रहे है ? उन्हे शायद दुराचारियो के कृत्य का अभी पता नही चला होगा ! जैसे ही वे सुनेंगे, चादसिंह को जरूर सजा देंगे। इन आततायियो को वे पूरा सबक सिखायेंगे ! जल्दी बताओ जयराज ! कब लौट रहे हैं महाराजा ?

जयराज सताप स चेतना खो बैठा। सितार एक ओर रखकर वह चुपचाप बैठ गया।

अच्छा ! यह सितार भी लाये हो ? ठीक हो किया तुमने ! मुझे भी नाचे बहुत दिन हो गये ह। तुम सितार बजाओ, आज मैं एक नये नृत्य का अभ्यास करूगी। महाराज थके-मादे आयेंगे तो मैं उन्हे यही नया नृत्य दिखाऊगी। नया राग और नये नृत्य से मैं उनकी तमाम थकावट कुछ क्षणो मे ही दूर कर दूगी ! कब आ रहे हैं महाराजा ?"

जयराज चुपचाप गभीर मुद्रा मे बैठा रहा।

रसकपूर ने सितार हाथो म ले लिया और स्वय ही उसकी उगलिया तारो पर फिरने लगी उनका कोई समाचार तो आया होगा ? तुम कुछ बोलते क्यो नही ? ' रसकपूर की उगलिया रुक गयी, सितार के तार भी खामोश हो गये। जयराज की अत्यधिक गभीरता स वह घबरा उठी, ' जयराज ! तुम इतने गभीर क्या हो ? तुम कुछ बोल क्यो नही रहे हो ?' वह जयराज को झकझोर कर पूछने लगी ' बोलो जय ! बोलो ! मैं नही घबराऊगी। महाराजा की क्या खबर है ? व सकुशल तो हैं न ? कब लौट रहे हैं वे ?"

' वे लौट आये हैं ! बडी मुश्किल स जयराज कह पाया।

साश्चर्य रसकपूर ने दुहराया, ' वे लौट आये हैं ?

'हा !

' फिर फिर भी "

' फिर भी वे तुमस दूर रहने को विवश हैं।

' विवश हैं ? ऐसा क्यो ?

"वे युद्ध मे हारकर लौटे हैं। धन-जन का भी बहुत नुक्सान हुआ है। मराठो को युद्ध का खर्चा और भारी जुमाना अभी चुकाया जाना है। राज कोष मे इतना धन है नही। इसलिए महाराजा को सामतो पर आश्रित होना पड रहा है। वे उन्हे नाराज या बागी बनाकर तुमसे नही मिल सकते। पर उनकी आखो मे रात दिन तुम्हारी ही छवि बनी रहती है। उनके मन मे हर घडी तुम्हारे मिलन की तडप रहती है। उन्होने ही मुझे तुम्हारा कुशल क्षेम पूछने के लिए यहा भेजा है। यह सितार तो मैं मात्र बहाने के लिये साथ लाया हू।"

रसकपूर की आह निकल गयी। उसकी आखो से अश्रु प्रवाहित होने लगे।

जयराज ने रसकपूर को ढाढस बधाया। उसे आशा दिलायी कि जैसे ही महाराजा परिस्थितियो से उभरेंगे, उसे वापस राजमहल मे बुला लेंगे।

जब रसकपूर कुछ सहज हुई तो बोली "क्या आर्थिक स्थिति ठीक होते ही महाराजा पुन मुझे राजमहल मे बुलवा लेंगे?"

"अवश्य बुलवा लेंगे! वे स्वय आकर तुम्हे यहा से ले जाएगे। अभी तो वे एकदम विवश है।"

"तो तो तुम मेरा एक काम करो! सिर्फ एक काम! मैं मैं जिंदगी भर तुम्हारे इस एहसान के लिए कृतज्ञ रहूँगी!"

"बताओ, मुझे क्या करना है?"

"तुम किसी प्रकार से मुझे यहा से बाहर निकाल दो। मैं मैं उस खजाने की खोज करूगी जो महाराजा सवाई जयसिंह ने आज ही के लिए जमीदोज किया था। मैं खजाना ढूढकर रहूँगी। तब ही तब ही मेरा प्रियतम मुझे वापस मिल सकेगा।"

"यह बडा ही कठिन काम है, रसकपूर! तुम यह नही कर पाओगी तुम्हारा सारा जीवन इसमे खप जायगा तब भी सफलता बहुत दूर होगी।"

"यहा भी तो जीवन सड रहा है! बाहर जाकर प्रयास करने मे क्या

नुकसान है, जय ! मुझे सिर्फ एक बार आजाद कर दो। मैं तुम्हारे "

"नहीं नहीं ! ऐसा मत कहो। अच्छा ! मैं तुम्हें आजाद किये जाने का कोई उपाय सोचता हूं।'

कुछ देर तक सोचने के बाद जयराज ने सितार उठाया।

'रसकपूर ! आज तुम्हारा इम्तिहान तुम खुद लोगी ! जितना अच्छा गा सकती हो, गाओ ! देर रात तक मैं सितार बजाऊंगा और तुम गाओगी। आज ऐसा गाओ कि सब सुनने वाले मस्त होकर झूमने लगें। उसके बाद ही मैं तुम्हें अगला कदम बताऊंगा।'

जयराज ने सितार बजाना शुरू किया। और रसकपूर ने गाना। देर रात तक दोनों कलाकार अपने फन से नाहरगढ़ किले को गुंजाते रहे।

आधी रात बीत चुकी थी। प्रहरी मधुर गायन सुनते-सुनते सुध-बुध खोकर ऊंघने लग गये थे।

जयराज ने तुरन्त अपने कपड़े खोलने शुरू किये। उसने अपने कपड़े रसकपूर को पहिना दिये और स्वयं रसकपूर के वस्त्र पहिन लिए।

यही उपयुक्त अवसर था। रसकपूर चुपचाप सितार लेकर जयराज के वेश में बाहर निकल आयी। अंधेरे में ऊंघ रहे प्रहरियों ने, जिन पर अभी तक संगीत का नशा छाया हुआ था रसकपूर को जयराज समझकर रोका टोका नहीं। रसकपूर किले के बाहर आ गयी। वह सीधे जंगल की ओर भाग गयी।

जयराज ने रसकपूर के चले जाने के बाद अपना सिर जोरों से दीवार से टकरा टकराकर अपने को घायल कर लिया, ताकि सुबह उसे देखकर यही समझा जाये कि रसकपूर ने उसे घायल कर वस्त्र बदल लिए और स्वयं फरार हो गयी।

□

नाहरगढ़ किले की कैद से फरार हो जाने के तीन वर्षों बाद तक रसकपूर की कोई खोज-खबर नहीं मिली। जयराज ने काफी प्रयत्न किये, परन्तु रसकपूर का कहीं पता नहीं चला।

महाराजा जगतसिंह रसकपूर के विछोह से बेहाल हो गये। युवा महाराजा इस आघात को बर्दाश्त नहीं कर सके। उनका मानसिक एवं शारीरिक ह्रास शुरू हो गया। महाराजा की सोलह रानियाँ और उनके सम्बन्धी भी इसे रोक नहीं पाये।

महाराजा का स्वास्थ्य निरंतर गिरता चला गया। राजवैद्य ने कई तरह के उपचार किये, पर महाराजा पर औषधियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

आज रसकपूर को नाहरगढ़ किले से गये पूरे तीन वर्ष हो चुके थे। महाराजा की रुक रुककर चल रही साँसें रह रहकर रसकपूर को पुकार उठतीं।

पूरा दिन महाराजा ने बड़ी बेचैनी से गुजारा। राजवैद्य निराश हो चुका था।

□

अमावस की रात होने के कारण परकोटे के सब द्वार सूर्यास्त होते ही बन्द कर दिये गये थे। रात का पहरा शुरू हो गया था। परकोटे पर बने गुम्बजों और बुर्जों पर खड़े प्रहरी आवाज लगाकर सुरक्षा का दायित्व निभा रहे थे।

रात्रि के पिछले दूसरे पहर में किसी नारी आकृति ने एक द्वार पर आकर दस्तक दी। उसके हाथ इतने शक्तिशाली नहीं थे कि वे कोई भारी आवाज पैदा कर सकते। फिर रात में किसी भी सूरत में द्वार न खोले जाने का सख्त आदेश भी था। रसकपूर पास के पेड़ के नीचे बैठ गयी और सुबह का इन्तजार करने लगी।

वैसे तो द्वार सूरज की पहली किरण के साथ ही खोल दिया जाता था परन्तु आज अस्वाभाविक रूप से द्वार काफी विलम्ब से खुला।

द्वार खुलते ही रसकपूर दौड़कर अन्दर जौहरी बाजार में आ गयी और फिर सीधा सब्जीमण्डी जाकर जयराज के निवास पर पहुँची।

सब्जीमंडी में जयराज के मकान तक पहुँचने के बीच कोई भी

रसकपूर को नहीं पहिचान पाया। तीन वर्षों में उसने अपनी सारी श्री खो दी थी। खूबसूरत आंखें गहरे गड्ढों में धस गयी थीं। रेशम सरीखे उसके लम्बे बाल रूखी लटों में बदल गये थे। शारीरिक सुडौलता के नाम पर सूखी खाल से ढकी हड्डियां भर रह गई थीं।

अजमेरी द्वार से जौहरी बाजार तक आते समय रसकपूर को सड़क पर कोई व्यक्ति दिखायी नहीं दिया। आकाश में चारों ओर कौए उड़कर काव काव का शोर मचा रहे थे। सारा वातावरण मनहूसियत लिये हुए था।

उसने आकर जयराज के आवास पर जोर जोर से दस्तक दी।

जयराज बाहर आ गया। पहले तो उसने रसकपूर को पहिचाना ही नहीं और फिर पहिचानते ही उसकी आंखों से आंसू बहने लगे।

"तुम मेरी हालत देखकर रो रहे हो न? अब कोई चिंता नहीं। मैं भी ठीक हो जाऊंगी और महाराजा भी। जयराज! मैंने खजाने का पता लगा लिया है। अब महाराजा सम्पन्न राजा हो जायेंगे! मुझे पुनः राज महल में ले जायेंगे। अब वे 'विपन्न शासक' नहीं रहेंगे।"

जयराज ने दोनों हाथों से रसकपूर के कंधों को पकड़ा और कुछ क्षण पर्यन्त उसके कांतिहीन चेहरे को देखता रहा। फिर बोला, "रसकपूर! तुम कुछ क्षण विलम्ब से पहुंची हो। महाराजा आज सुबह ही चल बसे। अब वे इस संसार में नहीं हैं।"

'क्या'... कहकर रसकपूर ने एक चीख मारी और बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी।

जयराज ने द्वार पर पड़ी बेहोश रसकपूर को उठाना चाहा पर उसके हाथ वापस लौट आये। वहां अब सिर्फ शरीर पड़ा था, प्राण पंछी उसी समय उड़ गया था।

अभागी! आना ही था तो दो पहर पहले आ जाती! खजाना ढूंढा भी ना तुमने चंद लम्हों की देर कर दी!"

महाराजा चले गये। रसकपूर चली गयी! रसकपूर के साथ ही खजाने का रहस्य भी चला गया।

मुझे सब याद आ चुका था। रूपसी अब मेरे लिए अजनबी नहीं थी। मैंने पूर्ण आत्मीयता के साथ रूपसी से कहा, "मुझे सब याद आ गया है, रसकपूर! उस दिन महाराजा के साथ साथ तुम भी तो संसार छोड़कर चली गयी थी। खजाने का रहस्य, जो तुमने अथक प्रयास करके प्राप्त किया था, तुम्हारे जाने के साथ ही गुप्त रह गया था।'

'हां, मैंने महाराजा के लिए अनेक कष्ट सहकर बड़ी मुश्किल से खजाने का पता लगाया था। परन्तु मेरा दुर्भाग्य! उस विपुल सम्पदा का उपभोग महाराजा नहीं कर पाये! काश, अगर वे सिर्फ एक दिन के लिए और जीवित रह पाते, तो खजाने को पाकर कितना खुश होते! उनका वह लावण्ययुक्त वीरता दर्शाता मुखमंडल पुनः दीप्त हो उठता और वे मुस्कराकर प्रधानमंत्री और सामन्तों से कहते, "ले जाओ जितना धन चाहिए, और सेना को संगठित करके मराठों को ऐसा सबक सिखाओ, जिससे दुबारा इस ओर देखने का वे साहस भी न कर सकें। सचमुच महाराजा खजाना पाकर अत्यन्त प्रफुल्लित हो उठते!"

मैं समझता हूं, खजाना पाकर वे उतना खुश नहीं होते जितना तुम्हें पाकर खुश होते। जानती हो रसकपूर! उनकी आंखें हर पल तुम्हारी छवि देखने के लिए तरसती रही थीं। स्वर्गलोक प्रस्थान के पूर्व तक चिर-निद्रा के लिए बन्द हो रही उनकी आंखों में निरन्तर तुम्हारी दर्शनाभिलाषा बनी रही। अन्त में घोर निराशा और दुःख के साथ ही उन्होंने अपनी पलकें बन्द की थीं।'

"सुख तो उनके भाग्य में लिखा ही न था। होश सम्भालते ही उन्हें

सामन्तों के विरोध का सामना करना पड गया था। एक युद्ध से लौटते थे तो दूसरे युद्ध के लिए कूच करने की तैयारी मे जुट जाते थे। एक दिन भी तो उन्होंने अपनी इच्छा के अनुसार नहीं जीया। मैं भी उन्हें वह सुख न दे पायी जिसके लिए वे वर्षों तक तरसते रहे।"

"इसमे तुम्हारा क्या कसूर है, रसकपूर! मनुष्य के जीवन मे 'भाग्य' भी तो कुछ अर्थ रखता है। उनके भाग्य मे सुख भोगना था ही नही।"

"हा, अन्यथा क्या वे मात्र बत्तीस वर्ष की आयु म ही स्वर्ग सिधार जाते। यह सब भाग्य का खेल ही तो है।"

"यह खेल तो कब का खत्म हो चुका, रसकपूर! फिर, तुम अब तक उनको ढूढती हुई क्या भटक रही हो? क्या नही उस खजाने का रहस्य किसी अन्य पर उदघाटित कर उसे इस धरती पर स्वर्ग-सा आनन्द प्रदान कर देती? अगर चाहो तो मुझ पर ही यह कृपा कर सकती हो और खजाने का रहस्य ..."

आत्मा ने मुझे बीच मे ही टोक दिया, "बिल्कुल नही! यह असभव है! इस खजाने का उपभोग सिर्फ महाराज जगतसिंह ही कर सकते हैं। तुम तो जानते ही हो कि इसी धन के अभाव के कारण उन्हें अनेक अत्याचार सहन करने पड़े थे और फिर यदि इस खजाने का समय पर उन्हें पता चल जाता तो किसमे इतनी हिम्मत थी जो मुझे उनसे अलग कर सकता! नही जयराज खजाने का रहस्य तो मैं महाराजा जगतसिंह के अलावा किसी को नही बताऊगी। उन्होंने मुझसे वायदा भी तो किया था कि हर जन्म मे वे मुझे मिलते रहेंगे। मुझे पूरा यकीन है कि वे अवश्य मिलेंगे। मुझसे मिले बिना व रह ही नहीं सकेंगे, जयराज!'

महाराजा जगतसिंह के प्रति उसके विश्वास को देखकर मैं दग रह गया।

वह पुन बोली "मुझ पर तुम्हारे पहले ही बहुत से एहसान हैं, जयराज! क्या एक एहसान और करोगे?" और मेरी स्वीकृति जाने बिना ही कहने लगी 'अनायास ही अगर कहीं महाराजा जगतसिंह से तुम्हारा

सामना हो जाए तो उनसे कहना तुम्हारी 'रस' इन्ही खण्डहरो मे तुम्हारी प्रतीक्षा मे भटक रही है।"

मैं हैरान मुद्रा मे आत्मा के मुह की ओर ताके जा रहा था। मुझे चुप देखकर उसने दुबारा कहा, "बोलो, जयराज! करोगे न मेरा यह काम ?"

"लेकिन महाराजा जगतसिंह के देहावसान को तो कई साल बीत चुके हैं। अब वे कहा और किस रूप मे होगे, मैं उन्हे कैसे पहचान पाऊगा!" मुझसे कहे बिना न रहा गया।

"नही, जय! उनकी आत्मा भी मेरी ही तरह भटक रही होगी और जरूर मेरी ही तलाश कर रही होगी। जैसे मैंने तुम्हें खोज निकाला है, इसी तरह हो सकता है वे भी भटकते भटकते कभी तुम तक पहुच जायें।"

इसकी सभावना पर सोचता हुआ मैं कुछ क्षण विचारो मे खोया खडा रहा।

एकाएक जब तन्द्रा टूटी तो देखा आत्मा जा चुकी थी।

मैंने 'रसकपूर 'रसकपूर' कई बार जोर जोर से पुकारा परन्तु खण्डहरो से टकराकर लौटी हुई आवाज के अलावा वहा कुछ न था।

अगले कई दिनो तक मैं लगातार उन खण्डहरो के चक्कर काटता रहा, परन्तु फिर कभी आत्मा से मेरा साक्षात्कार न हुआ। मैंने नाहरगढ किले के कोने-कोने मे तलाश की, जयगढ के आस पास तथा पूर्व जन्म के मकान का चप्पा चप्पा छान मारा, परन्तु रसकपूर की आत्मा फिर कभी प्रकट न हुई।

□□